ज्ञानामृत

अक्तूबर, 1982
वर्ष 18 ❋ अंक 4

मूल्य 1.25

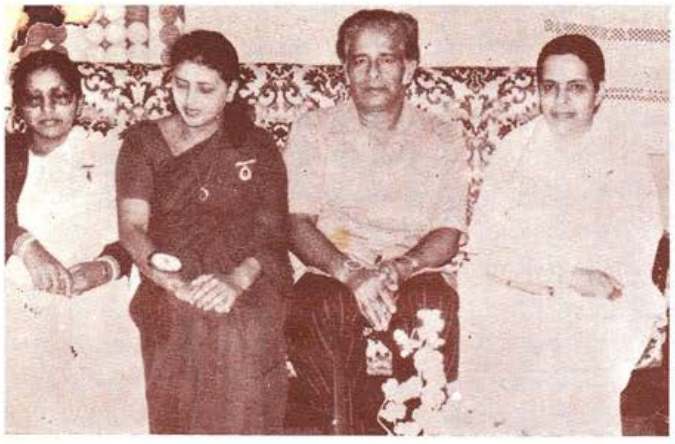

चित्र में मारीशियस के प्रधानमंत्री भ्राता अनीरुड जुगनॅथ तथा उनकी धर्मपत्नी को शिवबाबा का सन्देश देने के पश्चात ब्र० कु० गायित्री तथा चन्द्रा जी उनके साथ बैठे हैं।

बम्बई-गामदेवी सेवाकेन्द्र पर अपने संगीत कलाकारों के साथ भ्राता कल्याण जी और आनन्दजी दीदी मनमोहिनी जी के साथ ज्ञान चर्चा करते समय →

हैदराबाद में विश्व शान्ति महोत्सव के उद्घाटन समारोह के अवसर पर मंच पर (बाएं से) ब्र० कु० संतोष जी, भ्राता सी० जगन्नाधाराऊ, उप-मुख्य मन्त्री आ०प्र०, भ्राता गोपाल राऊ इखोटे, भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश आ० प्र०; रावल भाई तथा ब्र० कु० राजेन्द्र जी। ↓

मुख पृष्ठ से सम्बंधित

1. देहली-अशोक विहार में मानव उत्थान शान्ति मेले का उद्घाटन दृश्य। चित्र में भ्राता बालेश्वर राम केन्द्रीय कृषि राज्य मंत्री, ब्र० कु० दीदी मनमोहिनी जी अतिरिक्त प्रशासिका ब्र० कु० ई० वि० विद्यालय, ब्र० कु० हृदयमोहिनी जी तथा अन्य दीपक जलाते हुए।

2. देहली पहाड़गंज में आत्म-जागृति मेले का उद्घाटन दृष्य। ब्र० कु० हृदयमोहिनी जी संचालिका देहली क्षेत्र, ब्र० कु० शील, ब्र० कु० आशा तथा अन्य धर्मों के मुख्य दीप प्रज्जवलित करते हुए।

अशोक बिहार (देहली) में हुए मानव उत्थान शान्ति मेले के उद्घाटन अवसर पर मंच पर (बाएं से) ब्र० कु० ब्रजमोहन, ब्र० कु० रुकमणी जी, भ्राता बालेश्वर राम जी, दीदी मनमोहिनी जी, भ्राता वसन्त दादा पाटिल (महासचिव कांग्रेस-ई) ब्र० कु० हृदयमोहिनीजी, चक्रधारी जी तथा बहन गायत्री मोदी जी उपस्थित हैं।

बिहार के राज्यपाल भ्राता ए० आर० किदवई जी कदमकुआं पटना में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन करते तथा चित्रों की व्याख्या सुनते हुए।

लक्ष्मी नगर, देहली में उपसेवा केन्द्र के उद्घाटन पर मंच पर विराजमान हैं (बाएं से) ब्र० कु० हृदयमोहिनी जी, दीदी मनमोहिनी जी, मुख्य अतिथि सुशील कुमार तथा भ्राता टेकचन्द जैन जी।

नई दिल्ली में भ्राता जयप्रकाश जी उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पी. एन. भगवती जी को आबू में होने वाले विश्व शान्ति महासम्मेलन का निमंत्रण देते हुए, ब्र० कु० विमला तथा इन्द्रा साथ में बैठे हैं।

पहाड़गंज (देहली) में आत्म जागृति मेले के अवसर पर निकाली गई शोभा यात्रा का दृश्य।

Regd. No. D (E)-70

केरल के मुख्य मन्त्री भ्राता के० करुनाकरन को ईश्वरीय सन्देश देने के पश्चात उनके दायीं ओर ब्र० कु० शिव कन्या, शान्ता, राधा तथा बाईं ओर ब्र० कु० वासान, एवं खूफ खड़े हैं।

ट्रिनीडाड के हाईकमिश्नर पांडव भवन, माऊंट आबू में दीदी जी और दादी जी के साथ

ब्र० कु० सावित्री, हैदराबाद में हुए विश्व शान्ति महोत्सव में आन्ध्र प्रदेश के उप मुख्य मन्त्री भ्राता सी० जगन्नाधा राऊ तथा भ्राता गोपाल राऊ भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश आ० प्र० को चित्रों की व्याख्या देते हुए।

भ्राता निवैर जी, विदेश यात्रा से लौटने पर भारत के राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह जी को राष्ट्रपति भवन में मिलने पधारी राष्ट्रपति के, दायें ओर ब्र० कु० निवैर जी, बाईं ओर ब्र० कु० सूर्यप्रकाश जी हैं। राष्ट्रपति जी को आबू में होने वाले शान्ति सम्मेलन का निमन्त्रण दिया गया।

अमृत-सूची

क्र० सं०	विषय	पृष्ठ	क्र० सं०	विषय	पृष्ठ
१.	अनोखा विश्व-शान्ति महासम्मेलन	१	१३.	सतयुग—शान्ति-स्वधर्म और अहिंसा परमोधर्म	१८
२.	अहंकार (सम्पादकीय)	२	१४.	अन्धकार से प्रकाश की ओर	२१
३.	ओ प्राणप्रिये बाबा ! (कविता)	४	१५.	प्रभु से सच्चा स्नेह ही योग है	२३
४.	असली रावण को मारो	५	१६.	सीता, राम और रावण का आध्यात्मिक रहस्य	२४
५.	ईश्वरीय सेवा-समाचार (सचित्र)	७	१७.	आध्यात्मिक सेवा-समाचार (चित्रों में)	२५
६.	रावण से भयंकर युद्ध	९	१८.	सच्चा श्रवण कुमार	२७
७.	बाबा की शिक्षाएं (गीत)	१०	१९.	मैक्सिको में ब्रह्माकुमारी सुदेश बहन जी का टी० वी० इण्टरव्यू	३०
८.	प्रेम और नियम का सन्तुलन	११	२०.	आध्यात्मिक सेवा-समाचार	३१
९.	योग का सहज स्वरूप	१३			
१०.	सोच लो (कविता)	१५			
११.	ड्रामा बनाम भाग्य	१६			
१२.	बोलो रावण! तुम क्यों आए ? (कविता)	१७			

अनोखा विश्व-शान्ति महासम्मेलन

१० से १४ फ़रवरी १९८३ तक

माउण्ट आबू में १० से १४ फ़रवरी १९८३ तक एक अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन होगा जो किन्ही पहलुओं में अपनी प्रकार का एक पहला ही सम्मेलन होगा। इस सम्मेलन में लगभग ४० देशों के विभिन्न व्यवसायों तथा वर्गों के विश्व-विख्यात व्यक्ति भाग लेंगे जो कि अलग-अलग तथा संयुक्त अधिवेशनों में इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेंगे कि आज विश्व की जिन समस्याओं में अशान्ति बनी हुई है, उनके मूल में मानसिक कारण क्या-क्या हैं और किन नैतिक मूल्यों तथा दृष्टिकोणों को फिर से अपनाने से भू-मण्डल पर शान्ति हो सकेगी।

इस सम्मेलन में अब तक जिन्होंने भाग लेने की स्वीकृति दी है, उसमें संयुक्त राष्ट्र-संघ के ग़ैर सरकारी संस्थान की प्रमुख, ग्याना के उपप्रधान, हेग-स्थित अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के एक न्यायमूर्ति, भारत के उच्चतम न्यायालय के कुछ न्यायाधीश, कुछ देशीय एवं प्रादेशिक समाचार पत्रों के मुख्य सम्पादक, कुछ उपकुलपति इत्यादि सम्मिलित होंगे।

इस सम्मेलन का आयोजन प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय ने किया है जो कि संयुक्त राष्ट्र-संघ के ग़ैर-सरकारी संस्थान का सदस्य है और जिसके विश्व-भर में ७५० से भी अधिक सेवा केन्द्र हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव की ओर से वहाँ के सहायक महासचिव ने, भारत के कई राज्यपाल महोदयों ने, दलाई लामा तथा अन्य कई धार्मिक नेताओं ने इस सम्मेलन के प्रति अपनी शुभ कामनाएं भेजी हैं।

सम्पादकीय

अहंकार

शिव बाबा ने हमें बताया है कि पाँच मनोविकार ही संसार में व्याप्त सभी प्रकार की अशान्ति और सभी प्रकार के दु:खों का कारण हैं। कई बार बाबा ने इन विकारों के साथ एक और विकार की भी गणना की है। बाबा ने कहा है कि आलस्य छठा विकार है जो कि कभी-कभी प्रथम विकार का भी स्थान ले लेता है। परन्तु बाबा ने अनेक बार समझाया है कि यद्यपि काम, क्रोध आदि विकारों का वर्णन करते हुए काम को प्रथम और अहंकार को पंचम स्थान दिया जाता है तथापि प्रत्यक्ष या सूक्ष्म रीति अहंकार सदा प्रथम स्थान पर ही आसीन रहता है। बाबा ने समझाया है कि यह केवल प्रथम स्थान ही नहीं लेता बल्कि सभी मनोविकारों के मूल में सदा बना रहता है। दूसरे शब्दों में हम यों कहें कि अहंकार ही अन्य सब विकारों को जन्म देता, उनकी रक्षा करता और उनका पालन तथा उनकी पुष्टि करता है। अन्य किसी भी विकार को एक धक से मनोबल एवं योग बल के आधार पर नष्ट प्राय: किया भी जा सकता है परन्तु अहंकार को मिटाने के लिए तो जीवन-भर घिसना-पिसना पड़ता है, सिर की बाज़ी लगानी पड़ती है और ज्ञान को जीवन-भर घोट-घोट कर पीना पड़ता है और योग की भट्टी तपा-तपाकर इस सहस्र-बाहु शत्रु को ढूँढ-ढूँढकर, पकड़-पकड़कर योग की चिता में डालना पड़ता है। ऐसा अनेक सिरों वाला (Hydra-headed) है यह शत्रु जिसके लिए ज्ञान की साधारण तलवार, योग की साधारण बन्दूक और दिव्य गुणों का साधारण तीर काम नहीं करते बल्कि इसके लिए तो आणविक अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता है जो इस शत्रु की रग को बीन-बानकर अपनी ज्वाला में नाम और अस्तित्व रहित कर दे।

संसार में ऐसे कुछ लोग मिल जायेंगे जो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हों; ऐसे भी जन मिल जायेंगे जिनमें वैराग्य की भावना-प्रधान हो और जो लोभ और मोह से काफी हद तक ऊपर उठ चुके हों; ऐसे भी लोग मिलेंगे जिनमें शीतलता का गुण और क्रोध का अभाव बहुत मात्रा में होता है परन्तु अहंकार किसी विरले ही का पीछा छोड़ता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि अहंकार ऐसा विकार है जो मनुष्य को यह स्वीकार ही नहीं करने देता कि उसमें अहंकार है। प्राय: अहंकारी मनुष्य यह मानने में ही अपना अपमान समझता है कि उसमें अभिमान रूपी दुर्गुण अथवा मनोविकार है। तभी तो मनुष्य अभिमान को गर्व का नाम देते हुए सबके सामने बड़ी ख़ुशी से कहता है कि—"मुझे कहते हुए यह गर्व अनुभव होता है कि मैंने घोर परिश्रम करके इस पारितोषक को पाया है" और कभी वह इसे स्वमान की संज्ञा देकर कहता है कि—"आख़िर मैं भी स्वमान रखता हूँ। मैं आपकी इस अपमानजनक बात को बर्दाश्त नहीं कर सकता।" अन्य किसी समय वह चिल्ला उठता है और दुखित स्वर से कहता है—"मैं अभिमान नहीं करता, परन्तु आपने तो मुझे दो कौड़ी का समझ लिया है; आख़िर मेरी भी कुछ तो इज़्ज़त है; अगर किसी ने मेरी इज़्ज़त में हाथ डाला तो उसे मैं वह मज़ा चखाऊँगा कि जिसे वह सारी उम्र याद रखेगा!" इस प्रकार अहंकार शब्द-कोष में से एक विद्वान की तरह अच्छे-अच्छे मुहावरे और शब्द चुन-चुनकर अपना परिचय देता रहता है।

जैसे जिह्वा को कोई स्वादिष्ट पदार्थ दे देने पर, नेत्रों को कोई सुन्दर चीज़ अथवा दृश्य पेश करने पर मनुष्य को अच्छा लगता है, वैसे ही अहंकार को अनेकानेक उपाधियों से और प्रशंसा से ख़ुशी मिलती है। अहंकारी मनुष्य को यदि चिरकाल तक अपनी प्रशंसा सुनने को न मिले तो उसे ऐसी बेचैनी महसूस होती है जैसे किसी शराबी को काफी समय तक शराब या किसी सिगरेट पीने वाले को काफी समय तक सिगरेट पीने को न मिलने पर होती है। वास्तव में तो प्रशंसा और उपाधियाँ मनुष्य को उसके अच्छे काम के लिए एक धन्यवाद के प्रतीक के रूप में, शिष्टाचार के नाते से दी जाती हैं और जिसे किसी के कुछ गुण अच्छे लगते हैं, वह उसके गुणों का वर्णन स्वभावत: करता ही है। परन्तु अहंकारी मनुष्य उन्हें

सुनकर अपनी कर्त्तव्य पूर्ति से सन्तुष्ट होने की बजाय उनकी लालसा ही करने लग जाता है अथवा उसे अपना अधिकार मानने लगता है या भोजन की तरह उस पर निर्भर ही रहने लग जाता है—यह सब इसलिए होता है कि अहंकार उसकी बुद्धि पर पर्दा डालकर उसे कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के विवेक से भी शून्य बना देता है।

अहंकार विवेक को तो नष्ट करता ही है। जो चीज़ मनुष्य का साथ नहीं देने वाली, अथवा जिस चीज़ पर मनुष्य का अधिकार नहीं, उस पर भी मनुष्य अभिमान कर बैठता है। ज़ुल्फीकार अली भुट्टो जब पाकिस्तान के विदेश मन्त्री थे तो उन्होंने भारत के विदेश मन्त्री स्वर्णसिंह को कहा था कि पाकिस्तान भारत से १००० साल तक भी लड़ाई करेगा और जब भारत के विदेश मन्त्री उनके भड़काने वाले वक्तव्य के प्रति अपनी नाराज़गी प्रगट करने के लिए उठकर सभा से बाहर जा रहे थे तो भुट्टो ने अभिमान के नशे में चर होकर कहा—हिन्दुस्तानी कुत्ता (Indian dog) जा रहा है। अभिमान के मद में वह इतना भी विवेक और सन्तुलन खो बैठे कि संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे स्थान में, एक किसी बड़े देश के विदेश मन्त्री के लिए इतना भद्दा शब्द प्रयुक्त करना वर्ज है, वह यह भी भूल गये ! एक विदेश मन्त्री को अपमानित करने में उन्हें अपने अभिमान की पुष्टि होती नज़र आई—चाहे इसका परिणाम इसके विपरीत ही हुआ। काश्मीर की तो बात अलग रही, बंगला देश पाकिस्तान से अलग हो गया। वहाँ पाकिस्तान की सेनाओं को हथियार डालने पड़े। फिर स्वयं भुट्टो जी को शिमला में भारत से समझौता करना पड़ा और आख़िर उनका जीवनान्त किस दुःखान्त रीति से हुआ, यह इतिहास सबको ज्ञात है। इतिहास के पन्ने ऐसे कितने ही जीवन वृत्तान्तों से भरे पड़े हैं। हिटलर, जो किसी समय अपने सैन्य बल के आधार पर सारे विश्व या कम-से-कम सारे यूरोप पर अपनी प्रभु-सत्ता स्थापन करने के स्वप्न देखता था, न केवल अपने देश को भी अपने हाथ से गंवा बैठा बल्कि अपनी जान को बचाने के लिए परेशान हो गया और आख़िर उसने अपनी स्वयं हत्या करके अभिमान का परिणाम देख लिया परन्तु तब क्या हो सकता था ?

फिर भी इतिहास के इन वृत्तान्तों से मनुष्य शिक्षा नहीं लेता। कोई अपने सौन्दर्य पर अभिमान करता है तो कोई अपने यौवन पर; कोई अपने धन के कारण से इतराता है तो कोई अपने पद के नशे में चूर है; कोई स्वयं को बहुत उच्चकोटि का विद्वान मानकर मदहोश है तो कोई स्वयं को बड़ा लेखक या वक्ता मानकर अपने स्थान को बहुत ऊँचा मानता है। यद्यपि दुनिया में हर क्षेत्र में एक से एक प्रतिभाशाली तथा कुशल व्यक्ति पड़े हैं और अतीत में हर विद्या में निष्णात एक से एक बढ़कर चमत्कारी व्यक्ति हुए हैं तथापि आज "चूहे को मिली हल्दी की गाँठ तो उसने सोचा, मैं भी एक पंसारी हूँ"—इस उक्ति के अनुसार मनुष्य गर्वान्वित होकर अपने पतन का खुद ही खड्डा खोदता है। चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात। वह यह भूल जाता है कि मेरी चाँदनी तो सूर्य से ली हुई रोशनी है और कि मेरी तो स्वयं ही कलाएँ घटती बढ़ती हैं। इस विस्मृति के कारण उसका अभिमान अन्य सभी विकारों को भी जन्म देने वाला हो जाता है।

इसलिए कल्याणकारी बाबा ने हमें कहा है कि स्वयं को (१) सेवाधारी, (२) निमित्त और (३) प्रन्यासी (Trustee, ट्रस्टी) समझो और इन युक्तियों से निरहंकारी बनो।

परन्तु बाबा ने यह भी कह दिया है कि निरहंकारी बनने के लिए निराकारी बनना आवश्यक है। जितना-जितना हम निराकारी बनेंगे अर्थात् आत्मस्थित रहेंगे, उतना-उतना हम निर्विकारी बनेंगे और निरहंकारी भी। इसी तरह जितना-जितना हम निरहंकारी बनेंगे उतना-उतना हमें निराकारी और निर्विकारी बनने में भी आसानी होगी। बाबा ने हमें समझाया है कि यह तन काम बिकार से पैदा हुआ-हुआ, तमोगुणी प्रकृति द्वारा निर्मित, जरा, व्याधि आधीन और मरण धर्मा है, इसलिए इस पुरानी जूती का गर्व, इस कब्र दाखिल, क्लेश-प्राप्त काया का

अभिमान, इस लोष्ठवत शरीर के सौन्दर्य और बल के प्रति भ्रान्ति और आसक्ति नितान्त मिथ्या है। इसी प्रकार इस कलियुगी धन, जिस पर चोर-चकार, इनकम टैक्स और सरकार, भाई-बन्धु और परिवार, सबकी ईर्ष्या या इच्छा की निगाहें लगी हैं और जो भी चंचला प्रकृति-मात्र है, का अभिमान भी स्वयं को भूल के कूप में डालने के समान है। और, आज वास्तविक ज्ञान तो किसी को है ही नहीं बल्कि पोथों की पंडिताई से तो मनुष्य की बुद्धि ही पलीद (भ्रष्ट) हो गई है। अतः इन सब प्रकार के अभिमानों को छोड़कर एक परमात्मा ही की शरण लो और उसका बालक बनकर—एक प्रभु के सिवा मेरा कुछ भी नहीं—इस मस्ती में रहना ही जीवन को सफल बनाना है।

—जगदीश

ओ, प्राणप्रिये बाबा !

लेखक—ब्र० कु० सूरज प्रकाश, सहारनपुर

बूंद की आश थी मन में
गंगा ही बहा दी तुमने
कण चाहा
पाया भण्डार खुला तुम्हारा
घोर तिमिर में
खोजते थे किरण
दिनकर बनकर छा गये तुम
थी तमन्ना, तन्हाई में
मात्र एक झलक
देख लूं मैं
हृदय में ही समा गये तुम
लड़खड़ाते पैर
थे ढूंढते सहारा
गोद में ले लिया तुमने
ओह, करुनानिधि !
तुम समुद्र हम सीप
तुम सूर्य हम दीप
मैं तो बिना अर्थ
असहाय, असमर्थ
माया के आकर्षणों में फँसा
समय खो रहा था व्यर्थ
आपने एक ही पल में करा दिया
दिव्य साक्षात—अकस्मात
हुआ कृतार्थ
ओह ! पारसनाथ
लोह-सम मेरे जीवन को
पारस बन कंचन कर डाला
तृष्णा सब मिटी हृदय की
जगी जोत,
मन मन्दिर में
मिटा घोर तम
हुआ उजाला
दिव्यता की भर सुगन्धि
महकाई तुमने आत्मा
पत्थर को बना दिया
पुण्यात्मा
ओ, प्राणप्रिये बाबा !
आपने पकड़ी है जब से
मेरे इस जीवन की डोर
नाच उठा मन-मोर
जीवन का पोर-पोर
हो रहा विभोर
मिला मुझको अपनी
मंजिल का छोर
पाना था सो पा लिया
नहीं चाह
पाऊँ कुछ और
बस, केवल
यही है आपसे
इक इलतजा
पकड़ी है जो उंगली
आपने इस नाचीज की
छोड़ूंगा न कभी-कदापि नहीं
न हो ऐसा कभी
कि मैं अज्ञानता के अंधेरों में
पुनः भटक जाऊँ
इससे पहले कि मुझ पर हो
माया का यह आघात
आप पुनः पुनः उभारना मुझे
रहमत की करना बरसात

असली रावण को मारो

लेखक—ब्र० कु० रेवादास, बिलासपुर (हि० प्र०)

अश्विन मास की शुक्लदशमी को रावण पर राम की विजय के प्रतीकात्मक रूप में भारतीय युवक प्रतिवर्ष राम और लक्ष्मण आदि का स्वांग बनाकर रामायण में वर्णित राम उत्तपति, शिक्षा-ग्रहण, यौवन, स्वयंवर, वन गमन, लंका-आक्रमण, युद्ध आदि के सभी दृश्य रंगमंच पर दिखाकर रावण-कुम्भकरण, मेघनाथ आदि के कागजों और बांसों द्वारा बने हुये बड़े-बड़े पुतलों को आग लगाकर दशहरा अथवा विजयदशमी का त्यौहार मनाते चले आ रहे हैं। आज के वैज्ञानिक युग में जनसाधारण इन त्यौहारों को जीवन की समस्याओं एवं सांसारिक दुश्चिन्ताओं को क्षणभर के लिए भूल जाने का अवसर मात्र समझने लगा है। यद्यपि कुछ वर्षों पूर्व इस पर्व को धार्मिक एवं ऐतिहासिक मान्यता प्राप्त थी परन्तु निरन्तर नूतन अनुसंधान एवं शोधकार्य में सफल बुद्धिजीवी वर्ग पुरातत्व विशारदों एवं अनुसंधानकर्त्ता इन त्यौहारों की परम्परागत प्रथाओं को चुनौती देने लगे हैं।

भारत में त्यौहारों का प्राचुर्य है। दशहरे के अवसर पर हर लीला स्थान पर रावण के एक बहुत बड़े बुत को विजयदशमी की संध्या को जनसमूह के समक्ष जलाया जाता है। इस सारे कार्य पर निर्धन भारत देश का हर वर्ष करोड़ों रुपया खर्च होता है और करोड़ों कार्यघण्टे भी खर्च होते हैं। यद्यपि कहा तो यह जाता है कि पर्व का उद्देश्य सदाचार की दुराचार पर विजय दर्शाना है तथापि कितने लोग इस शिक्षा को ग्रहण करते हैं उसके बारे में विवेक का प्रयोग करके सत्य को अलग और कल्पना को अलग करके यथार्थ रूप में जानें तो सही। क्योंकि रामायण में तो कई ऐसी बातें लिखी हैं जिन्हें सुनकर कोई भी विचारवान व्यक्ति दांतों तले उंगली काट बैठते हैं। उदाहरण के लिये रामायण में लिखा है कि, 'रावण के दस सिर और बीस हाथ थे। श्री राम ने भाईयों सहित ११ हजार वर्ष राज्य करके ब्रह्मलोक को प्रस्थान किया। बाली और सुग्रीव की राजधानी किष्किधा और रावण की राजधानी लंका थी। और कि कुम्भकरण छः महिने सोया करता था। वह बहुत से ऋषियों और स्वर्ग की बहुत सी परियों को भी खा गया था। सुग्रीव से लड़ने के लिये जब वह उठा तो उसने २०० घड़े शराब पिये तथा जब वह लड़ा तो सैकड़ों वानर खा गया। और कि रावण ने राम की सीता का अपहरण किया तथा राम-रावण युद्ध में रावण के एक लाख पुत्र, सवा लाख नाती मारे गये और इन्द्र ने स्वर्ग से राम के लिये रथ भेजा, जो रावण की मृत्यु के तुरन्त बाद स्वर्ग लौट गया था।

इस प्रकार का उल्लेख जो रामायण में मिलता है उस पर किंचित विचार करके आप स्वयं अपने विवेक से पूछिये कि क्या कोई व्यक्ति जो पहले तो एक सिर और दो भुजाओं वाला हो और एकाएक दस सिर और बीस भुजाओं वाला हो जाये। क्या कोई व्यक्ति ११ हजार वर्ष तक जी सकता है? यह किष्किधा और लंका कहां थीं—इस सम्बन्ध में पुरातत्वविज्ञ इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह कवि की कल्पना है। स्वयं श्रीलंका की वर्तमान सरकार के प्रवक्ता कई बार कह चुके हैं कि वहां कोई रावण नाम का राजा नहीं हुआ है। क्या कोई व्यक्ति एक ही समय में २०० घड़े शराब पी सकता है? ऋषियों, परियों तथा सैकड़ों वानरों को खा जाने की बात शब्दार्थ में यथार्थ हो सकती है या यह वैचित्रयवाद ही है? क्या इस आख्यान का अक्षरार्थ लेना चाहिये या भावार्थ ही? क्या राम जिसे 'भगवान' की संज्ञा दी गई है, की पत्नी को उठाकर अपहरण करने का दुस्साहस किसी में हो सकता है? क्या भगवान की

पत्नी हो भी सकती है ? क्या कोई व्यक्ति ऐसा व्यक्ति हो सकता है जिसके एक लाख पुत्र तथा सवा लाख नाती हों ? फिर राम के पास यह रथ कहां से उतर आया जबकि वह अयोध्या से तो पैदल बनवास को गये थे, इन्द्र कौन था और यह स्वर्ग कहां है ? क्या यह कवि की कल्पना की कमाल नहीं कि वह इन्द्र से भी जैम्बोजैट मंगवाकर ला खड़ा कर सकता है ? यदि कोई व्यक्ति इन्हें सत्य मानने को तैयार है तब तो वह ज्ञान-विज्ञान, विश्व निरीक्षण सभी को छंलाग कर कल्पना की गगनचुम्बी उड़ान भरने वाली बात करता है।

अतः इस बात से आज कोई भी विचारवान व्यक्ति इन्कार नहीं कर सकता कि रामायण में अनेक काल्पनिक कथायें हैं। इसके कई कथान्तर हैं और कई पाठान्तर हैं। कवि द्वारा की गई अतिश्योक्तियां अथवा कल्पनायें हैं। हमें चाहिये कि किंचित इस बात पर विचार करें कि वह कहां तक सम्भावित या विश्वसनीय हो सकती हैं। हम उन्हें यों ही न मान लें। रामायण का गहराई से अध्ययन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वास्तव में यह सारी कथा तो एक आध्यात्मिक रूपक है जिसका सम्बन्ध राम के साथ जोड़ दिया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान के प्रति श्रद्धा बढ़ाने के लिये यह धर्म ग्रन्थ रचे गये। ग्रन्थकारों ने अपनी कल्पना को प्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्तियों के साथ जोड़कर धर्म-ग्रन्थ लिखे जिनको अंधश्रद्धावश लोगों ने सच्चा ऐतिहासिक ग्रन्थ मान लिया और उन्हीं को वह अपनी प्राचीन सभ्यता तथा सांस्कृति समझने लगे।

वास्तविकता तो यह है कि श्री राम का राज्य त्रेतायुग के आरम्भ में था और उनके काल में न तो विश्व में असुर या राक्षस थे न कोई रावण ही था और न ही उनकी धर्मपत्नी सीता चुराई गई थी। रावण वास्तव में माया अर्थात स्त्री और पुरुष में पाँच मनोविकारों का प्रतीक है। आज इन्हीं पाँच विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) के वशीभूत किसी नर को नारायण अथवा नारी को लक्ष्मी नहीं कह सकते। यह समस्त विश्व ही समुद्र से घिरा हुआ एक बृहद टापू (लंका) है और त्रेता के अन्त से लेकर यहां रावण राज्य (माया का राज्य) है। कल्पांत में परमपिता परमात्मा शिव जिन्हें राम भी कहा जाता है ने तत्कालीन वानर स्वभाव वाले मनुष्यों को ज्ञान-बाण, योगबाण तथा दिव्यगुण रूपी बाण देकर माया रूपी रावण को मार मिटाया था उसी आध्यात्मिक वृत्तांत के आधार पर ही बाद में रामायण की कथा लिखी गई। यह राम चरित्र कल्प पूर्व की तरह अब पुनः हो रहा है इसे यदि हम जानें तो हम आत्मा रूपी सीता रावण की जेल से छूटकर राम से मिल सकती हैं। कागज के बने रावण के बुत को जलाने की बजाये मन में बैठे इन विकारों रूपी रावण को वध करने यदि हम युद्ध स्तर पर जुट जायें तो हमारा तथा देश का कल्याण होगा और यह निर्धन देश हर वर्ष करोड़ों रुपये के खर्च से भी बच जायेगा।

□

ज्ञानामृत के बारे में जानकारी

ज्ञानामृत का वार्षिक शुल्क	१४.०० रुपये
अर्द्ध वार्षिक शुल्क	८.०० रुपये
विदेश के लिये शुल्क	७५.०० रुपये

ज्ञानामृत और वर्ल्ड रीन्युवल के लिए पत्र व्यवहार और शुल्क बी ९/१९, कृष्ण नगर, दिल्ली-५१ में ही भेजें।

देहली-लक्ष्मीनगर में नए उप-सेवाकेन्द्र का उद्घाटन अवसर पर ब्र० कु० पुष्पा, दीदी मनमोहिनी जी को बैज लगाते हुए।

ब्र० कु० निर्मल शान्ता जी कमलेश जी तथा हरमोहन पटनायक, कलेक्टर, तेलंगा बाजार कटक सेवा केन्द्र के ९ वें वार्षिकोत्सव का उद्घाटन करते हुए।

"गणेश चौथ मेला" चन्दौसी में कासगंज सेवा केन्द्र की ओर से मानव उत्थान आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करती हुई ब्र० कु० आत्म इन्द्रा जी। हाजी गुलाम मुहम्मद, संसद सदस्य, मेला मंत्री कमलेश चौधरी, सम्पादक लक्ष्मी नारायण तथा अन्य ब्र० कु० बहन भाई साथ में खड़े हैं।

नई दिल्ली में ब्र० कु० इन्द्रा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भ्राता मुर्तजा फ़ज़ल अली तथा उनकी धर्मपत्नी को शिवबाबा का सन्देश सुनाने के पश्चात् ईश्वरीय सौगात देते हुए।

गिरीश पटेल मैसूर में लाइन्ज क्लब में प्रवचन करते हुए।

बंगलौर में ब्र० कु० हृदयपुष्पा जी नैतिक मूल्यों पर हुए सम्मेलन का उदघाटन करते हुए। साथ में वी. वी. कालेज के प्राचार्य रामकृष्ण जी तथा प्राध्यापक भ्राता सदीक सुशील जी खड़े हैं।

बंगलोर में शान्ति सम्मेलन में मंच पर (बाएं से) भ्राता एस० आर० भगवत जी, भ्राता के० के० मूर्ति जी, ब्र० कु० सुन्दरी जी तथा ब्र० कु० हृदयपुष्पा जी।

नासिक नगरपालिका में "राजयोग द्वारा स्वर्ग की स्थापना" झांकी पर ब्र० कु० गीता जी नासिक रेवीन्यु विभाग के कमिश्नर राजाध्यक्ष जी तथा नासिक नगरपालिका के प्रशासक भ्राता ललरेजा जी को स्पष्टीकरण करती हुई दिखाई दे रही हैं।

शोलापुर में ब्र० कु० दीदी मनमोहिनी जी के पधारने पर स्वागत समारोह में बाएं से ब्र०कु० रुक्मणी जी, आदरणीय दीदी जी, सोमप्रभा जी, ब्र० कु० सन्तोष जी तथा ब्र० कु० महानन्दा जी मंच पर उपस्थित हैं।

अहमदाबाद में संस्कार परिवर्तन आध्यात्मिक प्रदर्शनी के उद्घाटन अवसर पर प्रवचन करते हुए भ्राता लाल भाई पटेल, साथ में अजीत भाई पटेल, ब्र०कु० सरला, मंजु बैठे हैं।

मुजफ़रपुर में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन डी. एम. भ्राता अरुण कुमार रथ जी कर रहे हैं। ब्र० कु० रानी जी तथा श्रीमति रथ साथ में हैं।

रावण से भयंकर युद्ध

लेखक— ब्र० कु० अशोक, विज्ञान भवन, आबू

विश्व घड़ी में संगम युग बजा है। ये रेडियो अव्यक्त वाणी है, अब आप धरती के फ़रिश्तों से खबरें सुनिये—

रावण को सारी धरती पर राज्य करते हुए दो युग हो रहे हैं इसके अत्याचार दिनोंदिन बढ़ते ही जा रहे हैं। भगवान के बच्चे ज़ोर-ज़ोर से भगवान का आह्वान कर रहे हैं कि हे प्रभु, अब तो आप ही हमारे सहारे हो, हमें बचाओ।

अपने बच्चों की हृदय स्पर्शी पुकार सुनकर उस करुणा सिन्धु का सिंहासन हिल उठा और १९३७ में उन्होंने धरती पर आकर रावण के विरुद्ध अपनी तैयारी शुरू की। रावण कोई छोटा-मोटा सेना नायक नहीं था। अतः भगवान ने उससे लोहा लेने के लिए एक मजबूत शक्ति सेना तैयार की। सन् १९५१ तक इस शक्ति सेना को पूर्ण शिक्षण देकर रावण से युद्ध के लिए मैदान में उतारा।

युद्ध का ऐलान कर दिया गया और इस शिव-शक्ति सेना के मुख्य सेनापति बने प्रजापिता ब्रह्मा। ब्रह्मा ने व अनेक सेनानायकों ने अपना तन, मन, और धन इस युद्ध में विजय पाने के लिए समर्पित कर दिया। इस लड़ाई की पूरी कामयाबी के लिए सेना को आबू की पहाड़ियों पर स्थानान्तरित किया गया। १९५१ में संग्राम शुरू करने के पूर्ण आदेश जारी कर दिये गये इनका कोड वर्ड 'ओम शान्ति' था।

लड़ाई ज़ोर-शोर से चालू हुई। सेनापति ब्रह्मा ने इस सेना को सारे विश्व में घेराबन्दी के आदेश दे दिये। प्रारम्भ में रावण का पलड़ा कुछ भारी रहा। परन्तु यह देखकर सेनापति ने प्रतिदिन बहुत सवेरे ही, जबकि रावण के पहरेदार भी सो जाते थे, युद्ध के आदेश दिये। प्रतिदिन प्रातः ४.०० बजे के भयानक आक्रमण से रावण सेना तिलमिला उठी। तब रावण ने अपनी सेना के सेनापतियों से सलाह की और निर्णय हुआ कि सवेरे के इस समय 'सुस्ती' नामक योद्धा को ही सेनापति बनाया जाए।

और सचमुच ही इस सेनापति ने रावण की हार को रोक दिया। उसने अपना ऐसा भीषण जाल बिछाया कि भगवान के कई सेनापति भी जाल में फँसने लगे। अब युद्ध बराबर टक्कर का हो चुका था।

भगवान की रसद सामग्री सेना को पूर्णतया मिल रही थी। रावण भी पूरी तैयारी के साथ मैदान में डटा था। इसके बाद शक्ति सेना के सेना अधिकारियों ने अटल तपस्या की और शिव से अनेक अमोघ शस्त्र प्राप्त किये। फिर लड़ाई ज़ोर से हुई। और रावण के करेक्टर लैस (Character less) के तारों को शक्ति सेना के सैनिकों ने वाईस लैस (Vice-less) के हथियारों से काट डाला। अब रावण की समाचार लाइन ठप पड़ गई। रावण बेचैन होने लगा।

रावण ने अपने सेनापति काम, क्रोध और अहंकार को ललकारा—कि देखते क्या हो, वीरो, अगर हम हार गये तो हमें कहीं भी ठिकाना नहीं मिलेगा। अतः तुम सभी अपना सूक्ष्म रूप धारण करो और शक्ति सेना पर ऐसे छा जाओ कि वे तुम्हें देख भी न सकें।

यह वार बहुत निराला था। शक्ति सेना पीछे हटने लगी। अब मुख्य सेनापति ब्रह्मा ने तीव्र तपस्या की और रावण सेना पर हवाई हमला करने के लिए वे अव्यक्त वतन चले गये और थल सेना की बागडोर अपने दो अत्यन्त वफादार सेनापतियों दादी प्रकाशमणी और दीदी मनमोहिनी को दे गये।

इन दोनों कुशल सेनापतियों के संचालन में शक्ति सेना तेज़ी से रावण के सैनिकों को कैद करने लगी। ऊपर से रोज़ रावण की सेना पर हवाई हमले

होने लगे। रावण अपनी दुर्दशा देखकर कराह उठा। हवाई हमले रावण की गुप्त सेना को तहस-नहस करने लगे। साथ-ही-साथ प्रजापिता ब्रह्मा ने सूक्ष्म वतन से अपनी रसद लाइन को और मज़बूत व तेज़ कर दिया। दिन-प्रति-दिन दूर तक वार करने वाले हथियार आने लगे और शक्ति सेना विजय के साथ आगे बढ़ने लगी।

शक्ति सेना की तीव्र गतिविधियों को जानकर रावण ने व्यर्थ संकल्पों के जहाज़ी बेड़े भेजे। यह देख-अति कुशल सेनापति दादी व दीदी ने औरों के अतिरिक्त उप-सेनापतियों का विशेष सहयोग लिया जिन्होंने 'मनन' की पनडुब्बियों से सभी जहाज़ी बेड़ों को डुबोने की पूर्ण तैयारी कर ली है।

अब कई वर्षों से चले आ रहे इस युद्ध में नया मोड़ आ गया। शक्ति सेना रावण की राजधानी पर हमला करने के लिए चल पड़ी। उन्होंने प्रातः ३.३० पर कूच किया जबकि रावण अपनी सेना सहित गहरी नींद में सोया था। लग्न की अग्नि से रावण की बड़ी-बड़ी इमारतों, ईर्ष्या, द्वेष, रोब आदि को भस्म कर दिया गया। रावण की राजधानी पर शक्ति सेना ने लाइट हाउस व माइट हाउस के गोले फेंके।

रावण ने इस आकस्मिक आक्रमण का भी बड़े साहस से जवाब दिया। उसने अपनी गुप्त सेना को बल भरकर युद्ध में भेजा। उसके तीक्ष्ण प्रहारों से शक्ति सेना के पाँव उखड़ने लगे। रावण ने सारी धरती पर फैशन, भुखमरी, बेकारी, भ्रष्टाचार और अनैतिकता का जाल बिछा दिया। उसकी सेना में अनेक सैनिक भर्ती हो रहे हैं।

रावण की तैयारी को देखते हुए भगवान ने अपने सभी सेनापतियों से सलाह की। नये-नये अस्त्र-शस्त्र वितरित किये गये। 'अन्तिम जीत हमारी है'—यह ऐलान कर दिया गया। युद्ध में जिन्होंने वीरता दिखाई, उन्हें पदक दिये गये और सारे विश्व में शक्ति सेना की भरती के लिए छोटे-बड़े ८०० केन्द्रों की स्थापना की गई। यह ऐलान कर दिया गया कि जो भी शक्ति सेना में सम्मिलित होगा, उसे स्वर्ग में बहुत बड़ा राज्य-भाग्य दिया जाएगा।

युद्ध जारी है, वृद्धि भी तीव्रगति से जारी है। और सभी आत्माओं से अनुरोध है कि जल्दी ही शक्ति सेना में शामिल होकर रावण को ज़िन्दा ही पकड़ने में योग-दान दें।

□

बाबा की शिक्षायें

लेखक—ब्र० कु० मोहन, अमृतसर

बाबा तुम्हारी शिक्षायें सदा हैं संग हमारे
चलते रहेंगे जीवन भर तेरी श्रीमत के सहारे
ना दुःख देना ना दुःख लेना, तूने हमें सिखाया है
शुभ चिन्तक बन रहना सबका, तूने यह पाठ पढ़ाया है
अपकारी पर उपकार करना, यहाँ है शब्द तुम्हारे
बाबा तुम्हारी शिक्षायें·····

निन्दक को भी स्नेह देना, कहती यह तेरी वाणी है
काँटों को जो फूल बना दे, तेरी वो दिव्य कहानी है
तू रचता है उन गुणों का, जो सबसे हैं न्यारे
बाबा तुम्हारी शिक्षायें·····

सबके तुम गुणों को उठाना, अवगुण किसी के ना अपनाना
गिरते हुयों को गले लगाना, सबको ज्ञान की राह दिखाना
बजते रहेंगे इन कानों में, तेरे यह ज्ञान नगाड़े
बाबा तुम्हारी शिक्षायें·····

प्रेम और नियम का सन्तुलन

ब्र० कु० उत्तम, मधुबन आबू

प्रेम कुमारी और नेमी नाथ परस्पर बहन-भाई हैं। यहाँ प्रेमकुमारी, प्रेम (Love) का और नेमी नाथ, नियम (Law) का प्रतीक मात्र हैं। दोनों का संतुलन आवश्यक है। यहाँ पर दोनों की एक भेंट वार्ता प्रस्तुत है।

प्रेम—कहो, नेमी भाई, तुम्हारा कारोबार कैसा है ?

नेमी—बहन, चारों ओर विश्व की सभी सरकारों पर मेरा ही बोलबाला है। नित्य नये नियम बनते जा रहे हैं।

प्रेम—परन्तु भाई तुम्हारी वृद्धि होने पर भी चारों ओर कानून और व्यवस्था की स्थिति डगमग नज़र आती है। इसका कारण जानते हो ?

नेमी—कारण वारण क्या होता है। लोग अगर नियमों का उलंघन करते हैं तो जेल में ठूंस दिये जाते हैं।

प्रेम—नहीं। मेरी कमी से संचालन में सफलता नहीं होती तुम मुझे भी साथ रखो यानि तुम्हारे नियम मेरे बिना सूने लगते हैं।

नेमी—नहीं मेरी बहन, मेरे बिना कोई उन्नति कर ही नहीं सकता मैं तो अकेला ही काफी हूँ।

प्रेम—नहीं नेमी, यह तुम्हारा अंहकार है। मेरे बिना तुम सभी को कठोर व सूने नज़र आते हो। और उन्नति भी मनुष्य को अहंकारी बना देती है।

नेमी—तुम तो कमज़ोर हो प्रेम। बहनें सदा ही कमज़ोर होती हैं। तुम मनुष्य को अलबेला बना देती हो। मैं उसे चुस्त बनाता हूँ। मनुष्य को बलवान व निर्भय बनाता हूँ।

प्रेम—नहीं नेमी, मैं कमज़ोर नहीं हूँ, यह तुम्हारा भ्रम है। जब से मुझे ईश्वरीय साथ मिला, मैं मनुष्य के जीवन का सबल आधार बन चुकी हूँ। मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी भी मेरी कामना करते हैं। मैं सभी के दिल को जीत लेती हूँ।

नेमीनाथ—प्रेम बहन, अगर मैं न हूँ तो तुम मनुष्य को विकृत कर देती हो। मनुष्य को अन्धा बना देती हो। और मनुष्य पतन की गहरी खाई में चला जाता है।

प्रेम—नहीं नहीं, तुम मुझे कलंकित नहीं कर सकते। मेरा स्वरूप तो पूर्ण पवित्र है। मनुष्य स्वयं अपनी कुबुद्धि से मुझे दूषित करता है।

नेमी—यही तो मैं भी कह रहा हूँ कि अगर तुम्हारे साथ मैं भी हूं तो तुम्हारा रूप सदा पवित्र रहे।

प्रेम—परन्तु तुमसे बड़ी मैं हूँ। देखो भगवान जब धरती पर आया तो पहले मुझे साथ लाया। इसी कारण आत्माएँ उसकी ओर खिचीं। अगर वह मेरा साथ न लेता तो तुम्हारा राज्य सूना रह जाता यानि कोई भी तुम्हें न अपनाता। मेरी महानता है कि भगवान को भी प्यार के सागर की उपाधि मिली।

नेमी—परन्तु मेरा महत्व भी कम नहीं। भगवान को विधान रचने वाला भी तो कहा है। उसके नियम अटल हैं। उन नियमों को वह भी नहीं तोड़ सकता।

प्रेम—नहीं नेमी, मेरे प्रभाव में भगवान तुम्हें भी भूल जाता है। और सुनो, मेरा इतना महत्व है कि मेरे कारण ही भगवान ने नई सृष्टि बनाने का कार्य माताओं को सौंपा। मेरे बिना भगवान की बात भी कोई न सुने।

नेमी—ठीक है प्रेम बहन, परन्तु तुम यह भूल गई कि मेरे बिना कानून व व्यवस्था सम्पन्न दुनिया व सत्य धर्म की स्थापना नहीं हो सकती। मेरे अभाव में ही धर्म का पतन हुआ।

प्रेम—परन्तु नेमी, आज मेरे अभाव में प्रशासन

असफ़ल हो रहे हैं।

नेमी—आज की रट मत लगाओ प्रेम। देखो, मेरे कारण ही तो देवता मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाए।

प्रेम—और तुम भूल गये कि मेरे कारण ही उस देवयुग में शेर व गाय भी एक घाट पानी पीते हैं और आज मेरे अभाव से ही भाई-भाई भी एक साथ नहीं रह सकते। इसलिए में तुमसे अधिक प्रभावशाली हूँ।

नेमी—परन्तु प्रेम बहन, तुम्हारी अधिकता बहुत खतरनाक है। तुम्हारी अधिकता में मनुष्य मुझे भी ताक पर रख देता है।

प्रेम—हाँ नेमी, मेरी अधिकता में मनुष्य तो क्या भगवान को भी वतन छोड़कर नंगे पैर दौड़ना पड़ता है।

नेमी—नहीं प्रेम, केवल ऐसा नहीं है। अपने समय पर नियम प्रमाण ही वह अवतरित होते हैं।

प्रेम—देखो नेमी नाथ, जब कोई भी मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान लेने आता है, तो अगर पहले उसे मैं न मिलूं तो वह तुम्हें कभी भी स्वीकार नहीं करे।

नेमी—परन्तु तुम्हारे कन्धे पर रखकर बन्दूक चलाने वाले लोग ज्ञानमार्ग पर फेल होते देखे गये हैं। अगर वे मुझे मन से स्वीकार कर लेते हैं तो उनके जीवन में सफ़लता ही सफ़लता होती है। अतः किसी के भाग्य निर्माण में मेरा महत्व अधिक है।

प्रेम—नेमी नाथ, अगर मैं न हूँ तो किसी को भी ईश्वरीय परिवार की भासना नहीं आती। और ज्ञान मार्ग, सन्यास मार्ग जैसा हो जाता है। मां भी मेरे द्वारा ही बच्चे को पालना देती है। अतः मेरी महिमा महान है।

नेमी—परन्तु मेरे बिना जीवन भी कोई जीवन है क्या!

प्रेम—वाह भई वाह···मेरे बिना जीवन में फूल ही नहीं खिलते। सच तो यही है कि मेरे बिना तुम्हें कोई पूछे भी नहीं। और मेरे बिना कोई संगठन मजबूत भी नहीं बन सकता।

नेमी—परन्तु मेरे बिना संगठन अधिक दिन भी नहीं चल सकता।

प्रेम—नेमी भाई, मेरे बल पर ही किसी का जीवन बदला जा सकता है तुमसे तो लोग वैसे ही डरते हैं और तुमसे दूर स्वतन्त्र रहना चाहते हैं। तुम तो बन्धन हो बन्धन···

नेमी—तुम मेरा निरादर कर रही हो प्रेम। मैं सबको पाप-बन्धन से मुक्त करने वाला हूँ।

प्रेम—मेरा साथ जीवन को रस-युक्त बनाता है। समस्याओं को हल्का कर देता है। तुम मनुष्य के जीवन को बोझिल बना देते हो। तुमसे घबराकर मनुष्य भगवान का हाथ भी छोड़ देते हैं।

नेमी—मुझे नीचा न दिखाओ बहन···हो तो तुम मेरी ही बहन भले ही बड़ी बहन हो।

प्रेम—नहीं नहीं नेमी भाई·····आओ हम दोनों समझौता कर लें। दोनों साथ साथ चलें।

नेमी—ठीक कहती हो प्रेम। जहाँ किसी व्यक्ति परिवार, समाज या राष्ट्र में हम दोनों भाई-बहन साथ-साथ होंगे, वहाँ सफ़लता व उन्नति निश्चित है।

प्रेम—अच्छा आओ हाथ मिलाओ। (दोनों हाथ मिलाते हैं।)

○

पृष्ट २३ का शेष

त्याग और तपस्या की शक्ति के द्वारा अनेक आत्माओं के जीवन को महान और ऊँचा बना सकता है। तभी कहा है कि (Simple Living and high Thinking) सादा जीवन और ऊँचा विचार। महान व्यक्ति का सादा जीवन ही उसकी सुन्दरता है और ऊँचे विचार ही उसकी सम्पति हैं। यह सब कैसे सम्भव हो सकता है। उसके लिए परमात्मा से योग युक्त होकर अपनी आत्मा को शक्तिशाली बनाएँ। ऐसा व्यक्ति सदा प्रभु मिलन के आनन्द में तृप्त रहता है। जो परमात्मा के ज्ञान को पाकर महान बन गया उसे मान पाने की इच्छा नहीं रहती।

योगी के जीवन में दिव्य गुणों रूपी फूलों की सुगन्धी आ जाती है जिससे वह दूसरों को भी खुशबूदार बना सकता है। योग ही सच्चा प्रेम है, लगन है, सच्ची सुखमय जीवन जीने का रास्ता है।

❀

"योग का सहज स्वरूप"

योगीराज, मधुबन, माउण्ट आबू

जैसे-जैसे हम अपने पथ पर आगे बढ़ते जा रहे हैं, हमें कल्प पूर्व की सभी स्मृतियां आती जा रही हैं और एक दिन अवश्य ही हम स्मृति स्वरूप बन जायेंगे। फिर हमें योगी बनने के लिए अभ्यास की आवश्यकता नहीं रहेगी, बल्कि हम योग स्वरूप हो जाएंगे। जितना अधिक हमें, अपने वास्तविक स्वरूप का भान होता जा रहा है, योग हमारे लिए सरल रूप लेता जा रहा है। योग एक स्मृति अथवा भान (Consciousness) है।

हम विचार करें—एक ओर गोप-गोपियां, जिन्होंने तपस्याएं नहीं की, ध्यान नहीं लगाया, वे त्यागी भी नहीं कहलाईं और सन्यासी भी नहीं, दूसरी ओर वे ऋषि जिन्होंने कठिन तपस्याएं कीं, मन को मारा, जंगलों की राहली, एकाग्रता से सिद्धियां प्राप्त की। परन्तु दोनों में महान कौन, परम भाग्यशाली कौन, किसका मार्ग सरल है, किसे श्रेष्ठ प्राप्तियां कहें? अवश्य ही ऋषि भी उन्हीं गोप-गोपियों के भाग्य की सराहना करते हैं, जो प्रभु-प्रेम में लवलीन हो चुकी थीं। जिनके मन में भगवान की छवि समा चुकी थी, जो भगवान को ही अपना सर्वस्व समर्पित कर चुकी थीं।

इसी प्रकार आओ, हम भी अपने योग को सरल स्वरूप दें। हम निसन्देह वही गोप-गोपियां हैं, जो पुनः भगवान के साथ हैं और परमात्मा के हर दिव्य कर्त्तव्य को इन नयनों से निहार रहे हैं। साथ-ही-साथ हम ऋषि भी हैं जो एकाग्रता के बल से अनेक दिव्य शक्तियां प्राप्त कर रहे हैं। परन्तु जब हम गोप-गोपी स्वरूप से सर्व सम्बन्धों से परमपिता के सदा साथ का अनुभव करें, तब ही हमें ऋषि रूप से एकाग्रता व साइलैन्स पावर की अनुभूति भी सहज रहेगी और हमें अनेक ईश्वरीय शक्तियां वरदान के रूप में प्राप्त होंगी।

तो आओ हम अपने वास्तविक स्वरूप को जानें और अपना सब कुछ एक को ही मन से मानें। हमारे जीवन में ये ईश्वरीय नशा समा जाए कि हमारे सम्बन्ध व सम्पर्क अब किससे हैं!

मैं कौन—हमें केवल यह जानना ही पर्याप्त नहीं कि मैं इस देह से भिन्न एक चेतन आत्मा हूं, बल्कि मैं कौन-सी आत्मा हूं, सृष्टि के आदि से अन्त तक मेरे कौन-कौन से मुख्य पार्ट रहे—इसका भान ज्यों-ज्यों आता रहेगा, हमारी आत्मिक स्थिति सरल रूप लेती जाएगी। हमें यह ईश्वरीय नशा बढ़ता जाएगा कि मैं ही वह हूं, जिनसे भक्त मन्दिरों में वरदान की याचना कर रहे हैं, आदि-आदि···। जैसे-जैसे इस सृष्टि चक्र में स्वयं का महत्व ज्ञात होता जाएगा, जीवन महानताओं से ओत-प्रोत होता चला जाएगा। जैसे-जैसे स्वयं की महानताओं का एहसास होता चला जाएगा, 'मैं पन' जीवन से दूर जाता रहेगा। अतः 'मैं कौन हूं'—इसका चिन्तन हरेक योगी को एकान्त में रमणकर अवश्य करना चाहिए।

मेरा बाप कौन—जरा विचार तो करो, हमारा बाप कौन है! हम किसकी सन्तान बने हैं!! हमारे पीछे कौन है!!! इस जग में एक प्रधान मंत्री के पुत्र को कितना नशा रहता है। उसकी चाल-ढाल, बोल, कर्म, कदम, विचार सब कितने नशे युक्त हो जाते हैं। उसे ख्याल रहने लगता है, मेरा बाप है, मेरे पीछे कौन है? इसी प्रकार हमें यह नशा चढ़ता जाए कि हम किसके हैं—यह नशा ही हमारे जीवन परिवर्तन का आधार बन जाएगा। मेरा बाप वही है जिसे भक्त भगवान कहकर, मन्दिरों और गुफाओं में एक झलक पाने को तरस रहे हैं। मेरा परमपिता वही है जिससे मिलने के लिए बड़े-बड़े ऋषि घोर तपस्या कर

रहे हैं। अब मेरा वह परमपिता मेरे पास है··· आदि, आदि···

मेरा परम शिक्षक कौन ?—जरा ख्याल करो, तुम्हें किसने पढ़ाया ! लोग जिसे ढूंढ-ढूंढ कर हार गये, जिसकी एक आवाज़ सुनने के लिए लोगों ने कठिन प्रयास किये, उसी की मधुर वाणी ने तुम्हारे कानों को मधुर बनाया !! जिन रहस्यों को बड़े-बड़े विद्वान न जान सके, वे सभी रहस्य उस परम-शिक्षक ने तुम्हें हंसते-बहलते सुना दिये। जिन उलझनों में शास्त्रार्थ महारथी शास्त्रार्थ कर रहे थे, उन गुत्थियों को उसने अति सरलता से सुलझा दिया। क्या कभी तुमने चित्त के पर्दे खोल कर विचारा है कि तुम किसके विद्यार्थी हो। कितनी बड़ी अथार्टी उस ज्ञान-दाता ने तुम्हें दी है। तुम्हें स्वयं उसने पढ़ाया जो ज्ञान का भण्डार व त्रिकालदर्शी है। इसे कहा जाता है परम-शिक्षक की याद व उससे असीम प्यार। इस दुनिया में अगर कोई P. H. D. या I.A.S. की डिगरी लेता है तो उसके कदम धरती पर नहीं टिकते। और तुम—तुम्हें सर्वश्रेष्ठ व सम्पूर्ण ज्ञान, सम्पूर्ण सत्य मिला। तो तुम्हें कितना नशा हो ! और यह नशा सहज ही आत्मा को बलवान बना देता है।

मेरा परम सतगुरु कौन ?—इस संसार में कई मनुष्यों को बड़ा ही गर्व रहता है कि हम फलाने गुरु के शिष्य हैं। हमारा गुरु ऐसा-ऐसा सिद्ध पुरुष है। परन्तु हे ब्रह्मा-वत्सो, तुम्हें किसने अपनी शरण दी है। वो सर्व-शक्तिमान, सर्व का मार्ग प्रदर्शक, मुक्ति-दाता, भाग्य विधाता, स्वयं तुम्हारा सद्गुरु बना है। जो सब गुरुओं का भी उद्धार कर्त्ता है, उसी ने तुम्हें अपनाया है। ज़रा विचार करो। उसने तुम्हें अपनी छत्र-छाया में बिठाकर सुरक्षित किया, यहीं पर तुम्हें बन्धन मुक्त बनाया, यहीं मुक्ति व स्वर्ग का आभास कराया। तो तुम्हें कितना गौरव हो, कि जिसकी शरण में ये सभी गुरु भी आराम लेने दौड़ेंगे, उसका हाथ तुम्हारे सिर पर है। तुम्हें उसने इतना स्पष्ट पथ दर्शाया जो तुम्हारे लिए कुछ भी रहस्य नहीं रहा। इसी तरह का ईश्वरीय रुहाब परम सद्गुरु की याद कहलाता है। यह रुहाब हमें उसकी श्री मत के प्रति श्रद्धा जागृत करता है और श्री मत से ही कल्याण का एहसास कराता है।

मेरा परम प्रियतम कौन ?—ऋषि मुनि भी उन गोपियों के भाग्य पर ईर्ष्या करते होंगे जिन्होंने स्वयं भगवान को मन से अपना प्रियतम स्वीकार किया। जिन्होंने केवल एक को ही छवि मन में बसाई थी। अनेक गीत गा-गाकर भी आज के भक्त अपना मन बहलाया करते हैं।

यहां किसी कन्या की शादी किसी धनवान, गुणवान या विद्यमान पति से हो जाए तो उसकी खुशी और नशे का हाल मत पूछो। और हम रूहों ने तो उस परम प्रियतम का वरण किया है, जो पतियों का पति और रूहों का सच्चा सहारा है। उसकी याद के सिवाय अन्य किसी की भी छवि हमारे मन में नहीं बस सकती। उसे भूल अन्य किसी को मन में बसाना वफादारी व पति व्रत नहीं है। उससे अधिक रूपवान, उस जैसा गुणवान, प्रभु जैसा विद्यावान और बलवान कोई भी नहीं। तो हम सजनियों को अपने उस सच्चे प्रियतम पर कितना नाज हो। उस जैसा और कोई नहीं···भले ही वह निराकार हो, परन्तु वह अपनी समस्त अनुभूति साकार में ही हमें कराता है। हम स्वप्न में भी अन्य किसी का वरण नहीं कर सकते। हमारा उससे इतना प्यार हो जाए कि हमें उसके सिवाय कुछ भी दिखाई न दे।

मेरा परम मित्र कौन ?—वह परम मित्र जो विपदा में हाथ बढ़ाता है, जो रोतों के आंसू पोंछता है, जो गिरतों को सहारा देता है, ऐसा भगवान मेरा सच्चा मीत आ बना है। मुझे उससे मित्रता निभानी है। उस मित्र से किए हुए वायदे पूरे करने हैं। सदा उसी मित्र के साथ मैं खेलूं ··उसी से मन बहलाया करूं···उसी मित्र से आंख मिचोनी करता रहूं···। ऐसे सच्चे हितैषी मित्र को भला कौन भूल सकता है। जो कभी भी हमसे दूर नहीं होता, हमें अकेला नहीं छोड़ता। इस प्रकार हम अपने मित्र से मित्रता बढ़ायें और उसे भूले नहीं।

मेरा रक्षक कौन ?—स्वयं सर्वशक्तिवान···

जिसके एक इशारे पर मैदान साफ हो जाते हैं, जिसकी दृष्टि पड़ते ही पापियों के दिल दहल जाते हैं···ऐसे सर्व समर्थ की छाया मेरे ऊपर है। ये स्मृति बड़ी दृढ़ व निर्भीक बना देती है। हम अपने रक्षक को भूलकर ही भयभीत होते हैं, स्वयं के मन को उलझाते हैं। हम सब जानते हैं कि उसकी छत्र-छाया में ही सदा पाण्डवों की रक्षा होती रही। पाण्डव कभी भूखे भी नहीं रहे। तो भला उसकी रक्षा में हमारा अहति कहां होने वाला है।

इस प्रकार से सर्व सम्बन्धों की याद हमारे जीवन को अति रूहाब युक्त व महान बना देती है। इस प्रकार की स्मृतियों में रहने से योग, कठिन अभ्यास का विषय नहीं रह जाता बल्कि उसकी याद मन में समाई रहती है। मन स्वतः ही शान्त रहता है और हमें बार-बार कठिन तपस्या करने की आवश्यकता नहीं रहती। यही है याद का सहज स्वरूप।

सोच लो

ब्र०कु०विजयसिंह, कृष्णा नगर, देहली

सोच लो और सोच लो, अब भी कुछ तो सोच लो.....
है काम अभी क्या रहा, बाकी अधूरा सोच लो
तन तो हमें सुन्दर मिला, हीरे की उपमा दे दई
बेकार यों ही गिर गया, तो किस काम का ये सोच लो·····

चौरासी में भी श्रेष्ठ हैं, दुर्लभ मिले वो रास्ता
तुमको सुलभ फिर देर क्यों, पाना नहीं क्या सोच लो·····
हैं साँस बेश-कीमती, यों हीं गईं अज्ञान से
बाकी निरर्थक मत करो, आओ जरा-सा सोच लो·····

यों ही दुःख पाये हैं, संभलो अभी भी सोच लो·····
सत्, रज को छोड़कर, आने लगे गुण तामसी
उस परमपिता को भूलकर, गैरों का गुण गाने लगे
अधूरे की लालसा, क्या है सही ये, सोच लो·····

मैं कौन हूँ, कहाँ घर मेरा उस रूप को बताएगें
अध्यात्मिक शक्ति से, तीनों तापों को भगाएगें
आओ दर्शन भी कराएं, त्रिलोक क्या ये देख लो·····
देख लो और जान लो और सोच लो ·····

कहता विजय मैं देह नहीं, मैं चीज तो कुछ और हूं
ज्योतिमय रूप बिन्दु हूं मैं आत्मा तो नूर हूं
इस तरह से जानकर आगे बढ़ो योगी बनो
बनना है महान ऐसा सोच लो·····

–: ड्रामा बनाम भाग्य :–

[ब्र० कु० नारायण लाल सिंघल, एडव्होकेट, इन्दौर]

परमपिता परमात्मा शिव अपनी वाणी में यह बताते हैं कि एक बने बनाये ड्रामा अनुसार यह सृष्टि चक्र सदैव घूमता रहता है अर्थात इस सृष्टि में जो कुछ होता रहता है और मनुष्यों द्वारा जो कुछ भी कर्म किये जाते हैं वह सब विश्व ड्रामा में पेश्तर से ही नोंद रहते हैं। मनुष्यों से पुरुषार्थ भी ड्रामा या भाग्य में लिखे अनुसार ही होता है, जिसके भाग्य में होता है वही परमपिता द्वारा दिया गया यह अद्वितीय ज्ञान अपने जीवन में धारण कर सकता है।

अब यहाँ यह शंका होती है कि शिवबाबा की वाणी एवं ड्रामा पर विश्वास करने वाला क्या यह नहीं सोचेगा कि ड्रामा या भाग्य में लिखा होगा तो मुझसे अपने आप पुरुषार्थ बन जावेगा और मुझे पुरुषार्थ करने के लिए प्रयत्न करने की क्या आवश्यकता है ? क्या ऐसा मनुष्य अलबेला या आलसी नहीं बन जावेगा ?

यहां मैं इस लेख में यही बताना चाहता हूं कि जिस मनुष्य का शिवबाबा की वाणी एवं ड्रामा के ज्ञान बिन्दु पर पूर्ण एवं दृढ़ विश्वास होगा उसे निश्चय ही श्रेष्ठ पद की प्राप्ति होगी और वह कभी भी अलबेला या आलसी नहीं बन सकता।

ड्रामा के ज्ञान बिन्दु पर दृढ़ विश्वास रखने वाले ज्ञानी मनुष्य की सदैव एक रस अवस्था रहती है अर्थात वह दुःख-सुख से परे रहता है क्योंकि हानि हो या लाभ, मान हो या अपमान, जीवन हो या मरण—किसी भी अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थिति में वह यही सोचता है कि यह तो होना ही था, इसमें कोई नई बात नहीं हुई (Nothing New.) वह सब चिंताओं एवं दुःखों से मुक्त होकर सदा संतुष्ट एवं प्रसन्न चित्त रहता है क्योंकि वह यह मानता है कि :—

(शेष पृष्ठ २० पर)

"बनी बनाई बन रही, अब कुछ बननी नाय।
चिंता जाकी कीजिये जो अनहोनी होय॥"
"राजी हैं हम उसी में, ड्रामा में जो नुंदा है।
यहां यों भी वाह-वाह है, यहां त्यों भी वाह-वाह है।"

यदि कर्मभोग के अनुसार उस पर कोई दुःख या व्याधि आती भी है तो वह यही समझता है कि यह तो आने ही वाली थी और इससे मेरे विकर्म का खाता दग्ध हो रहा है। अतः इसमें मेरा कल्याण ही समाया हुआ है। बने बनाये ड्रामा के अनुसार ही सब कार्य हो रहे हैं ऐसा समझने के कारण वह अपने को किसी कर्म का कर्त्ता समझता नहीं। अतः वह अपने आपको केवल निमित्त मात्र समझता है और उसका कर्त्तापन का अभिमान समाप्त हो जाता है जो कि मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और अधिकांश में उसके पतन का कारण बन जाता है।

वह विश्व में होने वाली समस्त घटनाओं को एक खेल को देखने वाले साक्षी के बतौर देखता रहता है, वह समझता है कि इस विशाल विश्व-ड्रामा में प्रत्येक मनुष्य अपने को दिया गया पार्ट बजा रहा है, अतः उसका सज्जन या दुर्जन किसी से भी राग या द्वेष होता नहीं और न किसी से घनिष्टता या वैरभाव ही होता है। कुछ भी हो लेकिन उसके अन्दर से यही आवाज़ निकलती है कि वाह मीठा ड्रामा, वाह मीठा बाबा—ऐसा नहीं कि जब अच्छी बात है तो ड्रामा और हलचल की बात है तो हाय हाय। ड्रामा पर पूर्ण निश्चय होने के कारण विकराल समस्या भी उसके लिए शीतल हो जाती है। ड्रामा की योजना (प्लेन) अनुसार शीघ्र भविष्य में होने वाले विनाश में पूरा विश्वास होने के कारण उसका इस दुनिया के पदार्थों से पूर्ण

बोलो रावण ! तुम क्यों आए ?

[ब्र० कु० राज कुमारी, शालीमार बाग, देहली]

क्या पता नहीं था तुमको हम सब—
झूम रहे थे स्वर्गिक सुखों में
विपदा का नाम नहीं था—
थे देव, देखते आत्मिक दृगों से
न कभी आह्वान किया तुम्हारा
न कभी किसी को तुम भाए।
बोलो रावण ! फिर तुम क्यों आए !

हम थे सब निर्विकारी, न था तुमसे कोई नाता
हर नर पवित्र था, थी हर नारी जगत्माता,
पीते थे सब सोम रस
तुम फिर विष क्यों लाए ?
बोलो रावण तुम क्यों आए ?

मन-वचन-कर्म थे सबके एक,
भाई-भाई की भावना, इरादे थे नेक
समस्याओं का ज्ञान नहीं था।
किसी भी विकार का ध्यान नहीं था।

तुम्हीं सब रोग - शोक लाए,
बोलो रावण तुम क्यों आए ?
क्या तुम्हें अच्छे नहीं लगे हंसते खेलते हम,
जो लाए अपने संग, मिट्टी के सारे गम

क्यों उतारी चमकीली ड्रैस हमारी
क्यों न आया तनिक भी तरस फिर गई बुद्धि तुम्हारी ?
ओह ! तुम कुछ कह रहे हो·····
क्या कहा·····?

तुम्हारा आना हुआ ड्रामा के वश !
वाह !·····
तो सुन लो·····
अब कूच करो शीघ्र यहां से, बस !

ड्रामा में लिखा, तुम होवोगे भस्म।
शिवालय बन रहा भारत !
अब फिर वही पूर्व के दिन आए।
बोलो रावण तुम क्यों आए ?

सतयुग - शान्ति-स्वधर्म और अहिंसा परमोधर्म

[ब्र० कु० रमेश, गामदेवी, बम्बई]

सतयुगी देवी देवतओं के लिये गया जाता है कि वे संपूर्ण निर्विकारी थे और उनका अहिंसा परमोधर्म था अर्थात् उनका जीवन व्यवहार ऐसा शुद्ध था कि उनमें विकारों का नाम-निशान भी नहीं था और अहिंसा रूपी परमधर्म था। सृष्टि चक्र के चित्र में बताया गया है कि कल्प के प्रारम्भ से आदि सनातन देवी देवता धर्म था और उस धर्म की अवधि पूरी ५०००, वर्ष की है। वास्तव में पहले जब इस सृष्टि पर एक धर्म था तब उस धर्म को नाम देने की जरूरत नहीं थी परन्तु जबसे अन्य धर्मों का प्रारम्भ हुआ तब प्राचीन और सर्व प्रथम धर्म को नाम दिया गया 'आदि सनातन देवी देवता धर्म।' तो इस आदि सनातन देवी देवता धर्म तथा उस देवी-देवताओं के गायन में कहा गया 'अहिंसा परमोधर्म'। इन दोनों के बीच में क्या सम्बन्ध है यह जानना जरूरी है। इस जानकारी से सृष्टि के आदि-धर्म के बारे में जो अनेक भ्रांतियां हैं; वह दूर हो जायेंगी।

कर्म और धर्म इन दो के बंधे हुए झूले में सारा समाज झूल रहा है और इन दो शब्दों के अनेक अर्थ समय प्रति समय सभी धर्म-स्थापकों ने तथा पन्थ आदि आदि के स्थापकों ने किये। धर्म स्थापकों को अपना धर्म स्थापन करना था, इसी कारण धर्म के बारे में उन्होंने सर्वांगीण विचार नहीं किया। किसी एक लक्षण, बात, विचार या दिव्य गुण को आधार स्तम्भ बनाकर उसी का विशेष चिंतन, उसी को विशेष साधनायोग्य साधन तथा लक्ष्य बनाकर अपने धर्म की स्थापना उन्होंने की परन्तु वह समय सृष्टि की आदि या परिवर्तन का समय नहीं था। उन्होंने अपनी स्थापना की शक्ति विश्व के पालना के समय में उपयोग में लाई, अर्थात् सभी धर्मों में उस समय पालना करने की शक्ति विशेष थी।

धर्म का एक अर्थ है—'धारणा'। धर्म एक बहुत बड़ी शक्ति भी है जिसके सहारे करोड़ों जीवात्माएं अपना जीवन सदियों से बिताते आये हैं। चारों युगों में धर्म की पालना की शक्ति का उपयोग हुआ परन्तु इस संगमयुग में स्थापना का कार्य होता है। परमपिता परमात्मा धर्म को शक्ति के रूप में, विश्व-परिवर्तन के रूप में अर्थात् सतयुगी दैवी सृष्टि के नव-निर्माण के कार्य में अपनाते हैं। जैसे एक माँ बच्चे को जन्म देने के लिये अपनी शारीरिक सर्व शक्तियों को नव-निर्माण के कार्य में लगाती है उसी तरह विश्व के नव-निर्माण के कार्य में धर्म के सर्वांगीण स्वरूप, लक्षण, शक्ति आदि आदि को कार्य में लगाया जाता है। संगम युग में धर्म के विभिन्न स्वरूपों तथा अंगों को नव-निर्माण के कार्य में अपनाया जाता है। उसमें एक अंग शान्ति और दूसरा पवित्रता। शांति की चाहना सबको है। शांति की शक्ति सबको काम में आती है। अशाँति से थकावट आदि उत्पन्न होती और शांति से थकावट दूर होती है। दिनभर जीवात्मा प्रवृत्ति में व्यस्त रहता है और प्रवृति के कारण शरीर थोड़ा बहुत थकता है और इसलिए रात्रि को वह नींद करता है। अर्थात् वह रात्रि को शान्त स्वरुप बनता है तो शान्ति वह जीवात्मा के सर्व प्रकार की थकावट उतारने में मददगार बनती है। निद्रावस्था में आत्मा शरीर के कर्मेंद्रियों से निवृत्त होकर के शान्त स्वरूप बनता है। हरेक आत्मा नींद करती है, शरीर नहीं। यद्यपि जीवात्मा नींद करता है लेकिन आंतरिक हृदय की सभी क्रियायें चलती रहती हैं—खाना हज़म होता है, हृदय की धड़कन चालू रहती है, यहां तक कि दाढ़ी के बाल भी

बढ़ते हैं। हृदय अगर शांति करले तो वह 'ओम-शांति' हो जाय। इसलिये शांति शरीर का स्वधर्म नहीं हो सकता। परन्तु आत्मा का स्वधर्म है।

इससे सिद्ध है कि निद्रा में सर्व जीवात्माओं को शांति की अनुभूति है परन्तु व्यवहार में भी उसी की अनुभूति हो यह बहुत आवश्यक है। आत्मा शांन्तिधाम की निवासी है इसलिये शांति आत्मा का स्वधर्म है। शांतिधाम में सब आत्मायें वापस जायेंगी इसलिये शान्तिधाम का सबको अनुभव है और इसी कारण आत्मा के रूप में शांति सबका स्वधर्म है। सब धर्मों ने तथा उनके अनेक पंथ, संप्रदाय आदि ने शांति को माना है और अपनाया है। शांति का एक सीधा संबंध (Direct connection) पवित्रता से है। शांतिकुंड में विकारों को स्वाहा करके सभी आत्माएं निर्विकारी बन सकती हैं। निराकार रूप में आत्मा निर्विकारी भी है। जीवात्मा बनने के बाद कर्म रूपी प्रवृत्ति शुरू होती है। बिंदु रूप की स्थिति में अपनी निराकारी स्थिति में स्थित होकर के आत्मा अपने निराकार परमपिता को याद करती है तब उसके विकर्म भस्म होते हैं और आत्मा में पवित्रता का बल भर जाता है।

परमपिता परमात्मा शिव बाबा हम आत्माओं को बताते हैं कि आप आत्माएं शान्त स्वरुप हो परंतु साथ-साथ फरमान करते हैं कि बच्चे पवित्र बनो और योगी बनो। पवित्रता की धारणा करना सिखाते हैं और योग की शक्ति द्वारा आत्मा पवित्रता धारण करती है। अन्य धर्म स्थापक मानते हैं कि गृहस्थ व्यवहार में आग और कपास एक साथ नहीं रह सकते परंतु सर्वशक्तिवान परमपिता से प्राप्त शक्ति के आधार पर पवित्रता को धारण करना बहुत सहज हो जाता है। व्यवहार में भी गृहस्थ व्यवहार में ही सबसे ज्यादा विकार युक्त व्यवहार होता है परंतु परमपिता इस अपवित्र गृहस्थ व्यवहार को पवित्र बनाते हैं। परमपिता परमात्मा हम बच्चों को पवित्रता के सर्वांगींण स्वरुप को जीवन में धारण कराते हैं अर्थात् शांति रूपी स्वधर्म में स्थित कराके हम बच्चों को पवित्रता रूपी परम जीवन व्यवहार को धारण करवाते हैं। पवित्रता को धारण करने वाली आत्मायें ही सतयुगी सृष्टि में आ सकेंगी। शांति रुपी स्वधर्म को धारण करनेवाली सभी आत्मायें हैं और इसलिए सब शांतिधाम में जा सकते हैं। वहां परमपिता रहते हैं उसी कारण वह परमधाम भी है। परंतु पवित्रता रूपी परम धारणा को सभी आत्माएं धारण नहीं करतीं। इसी कारण पवित्रता सब आत्माओं का स्वधर्म नहीं परंतु सतयुगी सृष्टि में आने वालों का ही परमधर्म बनता है। परमपिता परमात्मा ने अपनी पावन कल्याणकारी शक्ति के आधार पर परम तप और जीवन व्यवहार बनाकर जीवात्माओं को विकार रूपी हिंसा से बचाया इसीलिए इसे परमधर्म कहा गया है। अहिंसा परमधर्म है क्योंकि उसकी स्थापना परमपिता परमात्मा ने की है। अन्य सभी धर्मों की स्थापना आत्माओं ने की है इसलिए वे सब धर्म सिर्फ धर्म ही हैं।

आत्मा ही पतित या पवित्र बनती है इसीलिए मनुष्यात्माओं को पापात्मा या पुण्यात्मा कहते हैं। विकार युक्त कर्म से पाप निर्माण होता है। पवित्रता कर्मों को और उसके आधार से आत्मा को पावन बनाती है। सतयुगी सृष्टि दैवी-सृष्टि से बदलकर मृत्युलोक बनती है ऐसा गीता में लिखा है।

आत्मा तो अविनाशी है इसी कारण हिंसा और अहिंसा का संबंध आत्मा के स्वरुप के साथ नहीं परंतु शक्ति के साथ है। पवित्रता यह अहिंसा है क्योंकि उससे आत्मा की शक्ति का हनन या हिंसा नहीं होती। अहिंसा अर्थात् जिसमें विकारों आदि द्वारा आत्मा की शक्ति की हिंसा या बरबादी नहीं होती। पवित्रता को अहिंसा नाम से गाया गया क्योंकि पवित्रता की शक्ति को सतयुगी सृष्टि की रचना में उपयोग में लाया। सतयुग में भी सबका जीवन व्यवहार अहिंसा के बल पर चलता है अर्थात् सतयुग में रहने वाले देवी-देवताओं का जीवन धर्म और व्यवहार पवित्र था। आज सृष्टि में सबका व्यवहार धर्म के मुताबिक नहीं परंतु विपरीत है। वहां सबका धर्मयुक्त व्यवहार अर्थात् पवित्रता युक्त या अहिंसा युक्त व्यवहार

था। या तो कहो वहां संपूर्ण निर्विकारी रूपी अहिंसा परमधर्म था। विश्व के सभी धर्मों में वह श्रेष्ठ धर्म या परम है इसी कारण ही उसे परमधर्म कहा जाता है। परमपिता परमात्मा द्वारा पवित्रता रूपी धर्म की स्थापना होती है। उसी कारण भी उसे परम-धर्म कहा गया।

द्वापरयुग के बाद इस सृष्टि मंच पर धर्मों का पार्ट शुरू हुआ। जन्म के आधार पर धर्म का संबंध बना। हिंदु धर्म के परिवार में जन्म लेने के कारण हिंदु और बौधी माँ-बाप के पास जन्म लेने के कारण उस व्यक्ति का बौद्ध धर्म होता है। उसी संदर्भ में कहा जाए कि शांति यह धर्म नहीं परन्तु स्वधर्म है अर्थात् देह का धर्म नहीं परन्तु आत्मा का स्वधर्म है। शांति सबका स्वधर्म है उसी कारण उसके आधार पर कोई भी मठ-पंथ या संप्रदाय रूपी भेद उसके आधार पर नहीं बना। पवित्रता पहले दो युगों में परमधर्म के स्वरूप में रही और बाद में एक विशेष लक्ष्य तथा लक्षण के रूप से जैन धर्म ने उसको अपनाया। शांति कभी भी धर्म नहीं बनी वह सदा के लिए स्वधर्म ही रही। इसलिए शांति अशांति का यह सृष्टि खेल नहीं परन्तु पवित्रता और अपवित्रता का खेल है। पवित्रता धारण करने का ज्ञान परमपिता को देना पड़ा। शांति स्वधर्म है इसलिए उसे सिखाना नहीं पड़ता। नींद कैसे करना यह सिखलाने की आवश्यकता नहीं वह तो सबका अभ्यास है और सभी युगों में शांति स्वधर्म के रूप में सबका जीवन-व्यवहार है। नींद यह शांति का एक लक्षण है और विकारों की अग्नि से जब आत्मा पवित्र बनती है तो जो शांति प्राप्त होती है वह शान्ति, शान्ति का दूसरा अंग है। नींद की शांति निवृत्ति से मिलती है और पवित्रता के आधार से प्रवृत्ति में विशेष शांति मिलती है। आज की दुनिया में प्रवृत्ति में शांति और शांति युक्त प्रवृत्ति की जरूरत है। ऐसी प्रवृत्ति की अनुभूति परमात्मा कराते हैं। इसीलिए उन्होंका गायन है 'शांति के सागर'। सतयुग है पवित्र और शान्ति संपन्न प्रवृत्ति का केन्द्र स्थान। उसी केन्द्र को अब विशेष केन्द्र बनाना है।

पृष्ठ १६ का शेष [ड्रामा बनाम भाग्य]

वैराग्य होकर उसको कोई सांसारिक कामना नहीं रहती और 'इच्छा मात्रं अविद्या' की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

ऐसी अवस्था में भी मनुष्य कोई कर्म किये बगैर रह सकता नहीं, गीता में भगवान ने भी कहा है :—

न हि काश्चितक्षणमपि, जातु निष्ठत्य कर्मकृत।
कार्यं तेह्यवशः कर्म, सर्वः प्रकृतिजैर्गुणै ।। ३-५

अनुवाद—कोई भी मनुष्य एक क्षण के लिए भी कोई कर्म किये बगैर नहीं रह सकता। प्राकृतिक देह में होने के कारण उससे बलात कुछ न कुछ कर्म स्वभावतः होते ही रहते हैं।

अतः जब प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ कर्म करना ही पड़ता है, तो ड्रामा पर विश्वास करने वाले ज्ञानी मनुष्यों द्वारा सत्कर्म ही होते रहते हैं, किसी भी मनुष्य या पदार्थ में अथवा कर्मफल में आसक्ति नहीं होने के कारण उससे कोई विकर्म होता ही नहीं। परमपिता शिवबाबा के कहे अनुसार वह देह और देह के सम्बन्धों में अनासक्त होकर वह सदा उनकी याद में मग्न रहता है और उनके कार्य में तन, मन, धन से सहयोग करता है। उसकी एक आँख में ड्रामा का ज्ञान बिन्दु व दूसरी आँख में पुरुषार्थ का बिन्दु समाया रहता है। परमपिता की याद उसके हृदय में नित्य समाई रहती है। इस तरह उसका पाप का खाता धीरे-धीरे समाप्त होकर पुण्य का खाता जमा होता रहता है। अतः यह शंका करना निर्मूल है कि ड्रामा में विश्वास होने के कारण वह आलसी या अलबेला बन जावेगा या वह कोई पुरुषार्थ करेगा ही नहीं। वास्तव में वह कर्म करेगा लेकिन इस दुनिया में प्राप्त होने वाले विनाशी फल के लिए नहीं, लेकिन शिवबाबा के लिए, जिससे उसको अविनाशी फल की प्राप्ति अर्थात् सतयुगी दुनिया में श्रेष्ठ पद की प्राप्ति होगी। वह पुषरुार्थ अवश्य करेगा लेकिन कर्मफल में उसकी आसक्ति नहीं होगी जिसके कारण वह सांसारिक दुःख-सुख से मुक्त होकर एक रस अवस्था में स्थित रहेगा। ०

अलौकिक अनुभव

अंधकार से प्रकाश की ओर

(ब्रह्माकुमार मनोहर लाल गेरा, फरीदाबाद)

सोचता था मानव जीवन एक संग्राम है। यह हार ज़ीत का खेल है, परन्तु जब परमपिता परमात्मा शिव से तीसरा नेत्र मिला तो अनुभव हुआ कि जीवन एक संग्राम नहीं अपितु, हर मनुष्यात्मा एक्टर समान सृष्टि रंगमंच पर पार्ट अदा कर रही है।

एक आस्तिक परिवार में जन्म लेने के फलस्वरूप बचपन से ही ऐसे विचार थे दुखियों की सेवा करना, समाज की सेवा करना और देश प्रेम मेरे अन्दर कूट-कूट कर भरा हुआ था। प्रभु मिलन की उत्कण्ठा इतनी थी कि हर धार्मिक संस्था में जाता रहा, तीर्थ यात्राऐं भी कीं परन्तु कहीं से भी ईश्वरीय अनुभूति होने की सम्भावना नहीं रही अर्थात् असन्तुष्टि बनी रही। धीरे-धीरे प्रभु भक्ति से मन उठ गया और अपने कार्य व्यवहार में ही व्यस्त रहने लगा। खूब पैसा कमाया और हर प्रकार के साधनों से अपने परिवार को भरपूर कर दिया। भौतिक सुखों को ही अपना जीवन समझने लगा और इन अल्पकाल के सुखों की पूर्ति में ही दिन-रात व्यस्त रहता था। सुबह देर से उठना और रात्री को देर से सोना क्योंकि रात को अधिक समय तक दोस्तों में गपशप में बिता देता था। परिवार के प्रति तो सिर्फ़ इतना कर्तव्य निभाते थे कि उनकी आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा कर देना, पिकनिक आदि में ले जाना, किसी तीर्थ-स्थान पर घुमा लाना। कई प्रकार के व्यसन पिछले पाँच-छः वर्षों से आने लगे। जीवन नीरसता की ओर बढ़ता जा रहा था। सुबह होती, शाम होती जिन्दगी यूँ ही समाप्त हो रही थी। आलस्य अपनी चरम-सीमा तक पहुँच चुका था। अब मन में यही विचार आता कि क्या इस दुनिया में आने का केवल यही अभिप्राय है कि धन कमाना, बाल बच्चों को पालना व दोस्तों आदि में समय नष्ट करना। जब एकान्त में होता तो इन्हीं बातों पर सोचा करता लेकिन देह अभिमान मेरे अन्दर अत्याधिक भरा हुआ था।

संक्षिप्त में जो मैंने वर्णन किया यही जीवन जी रहे थे कि एक किरण उजियाले की मेरे जीवन में आई। जब मैं अपने इष्ट-मित्रों व परिवार सहित गर्मियों की छुट्टी में श्रीनगर (काश्मीर) घूमने गया। पहलगाँव से हम वापिस जाने ही वाले थे कि रास्ते में एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगी देखी। इधर हमारी बस के जाने का समय भी होने वाला था परन्तु जैसे मुझे किसी शक्ति ने प्रदर्शनी देखने की उत्कण्ठा जागृत की और उसी उत्कन्ठा से मैं सभी को प्रदर्शनी में ले गया। एक बहन चित्रों पर समझा रही थी जो अन्तिम तीन चार चित्रों को ही मैंने देखा और मुझे वह बातें अच्छी लगी और मैंने कुछेक ज्ञान की पुस्तकें भी लीं। और यह जान कर हर्ष हुआ कि उसका सेवाकेन्द्र फरीदाबाद में भी है। रास्ते में मित्रों से यह बात हुई कि मेरा वज़न ज़्यादा बढ़ गया है अच्छा है योग सीख लूँगा तो वज़न तो कम हो जायगा। समझता था यह भी कोई योग आसन वगैरा सिखाऐंगे। लेकिन यहां आकर मैं अपने धन्धे में व्यस्त हो जाने के कारण भूल गया कि मुझे कहीं जाना है या नहीं।

लगभग तीन मास बाद मेरे जीवन में एक ऐसी परिस्थिति आई जो मेरा जीवन अशान्त हो गया और अशान्ति के कारण मुझे रात को नींद नहीं आती थी। एक दिन सारी रात सोया नहीं, सुबह होते अपने मन को बहलाने के लिए मैं सैर करने निकल पड़ा। सैर करते परमात्मा का गीत गुनगुना रहा था कि विचार आया तुम काश्मीर से कुछ पुस्तकें लाये थे वह तो तुम ने पढ़ी नहीं ? यह विचार आते ही मैं वापिस घर आ गया और पुस्तकें निकाली उसमें

सच्ची मन की शान्ति नामक पुस्तक के दो पृष्ट पढ़े तो ध्यान आया कि इसका सेन्टर तो यहाँ भी है और उसे छोड़ ढूंढता आश्रम में पहुँच गया। एक सप्ताह का कोर्स किया लेकिन पहले दिन से ही मुझे ऐसा महसूस हुआ कि जिस लक्ष्य की तलाश में तुम बचपन से भटक रहे थे वह यहाँ पूरा हो जाएगा। इस एक सप्ताह में मुझे जो ज्ञान मिला उसने मेरे सारे मिथ्या विचारों को झकझोर दिया और मेरे जीवन के अन्दर एक नया परिवर्तन आया और मैं पूर्ण निश्चय से कहता हूँ कि इस विद्यालय के अन्दर जो शिक्षा दी जाती है वह स्वयं परमपिता परमात्मा प्रजापिता ब्रह्मा के साकार माध्यम के द्वारा दे रहे हैं जिससे अनेक भटकती हुई आत्माओं को अपनी मंजिल की सही पहचान मिल चुकी है। ८ मास से मैं परिवार सहित रोजाना क्लास करता हूँ। और दो बारी मधुबन (माऊँट आबू) में भी होकर आया हूँ। मधुबन को देखकर तो ऐसा लगा कि संगमयुग का स्वर्ग है तो मधुबन ही है। इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय के अन्दर मैंने यह शिक्षा प्राप्त की कि किस तरह गृहस्थ में रहते हुए इस सहज राजयोग की शिक्षा को अपने जीवन में अपना कर एक सच्चा कर्मयोगी बन जाऐं। और पाँचों विकारों पर किस तरह विजय पाई जाए और इसका मैं पूर्ण रूप से पुरुषार्थी हूँ। और मेरी हर समय यही शुभ कामना है कि अन्य आत्मायें भी इस ईश्वरीय ज्ञान को अपने जीवन में अपना कर शांत व सुखी बनाऐं।

आओ अलौकिक ताश खेलें

ब्र० कु० छोटेलाल, इन्दौर (म० प्र०)

आओ अलौकिक ताश खेलें, शिव बाबा के संग में।
कितना मीठा कितना प्यारा, बाबा मिला है संगम में।। (स्थाई)
"दुक्की" में देखो दूसरा न कोई, साथी है एक शिव भगवान।
"तिक्की" में है तीन लोक अब, त्रिमूर्ति का कर लें ध्यान।
"चौकी" में देखो चार युगों का, ज्ञान मिला है संगम में।।
आओ अलौकिक ताश.....
"पञ्जे" में देखो पाँच तत्व को, देह से भान हटाना है।
"छक्के" छुड़ाकर माया का, अब नाम निशान मिटाना है।
"सत्ते" में देखो सत्यनारायण बन, आना है हमें सतयुग में।।
आओ अलौकिक ताश.....
"अट्ठे" में देखो अष्ट रत्न का, मणका बन दिखलाना है।
"नहले" पे फिर "देहला" बनकर, रावण मार गिराना है।
"गुलाम" नहीं है विषयों के, "बेगम" पुर के "बादशाह" हम।।
आओ अलौकिक ताश.....
"इक्के" में देखो एक पिता के, नयनों के हम तारे हैं।
एक से ही सब रिश्ते हमारे, सारे जहाँ से न्यारे हैं।
खेल खत्म होता है अब तो, चलना है बाबा संग में।।
आओ अलौकिक ताश खेलें, शिव बाबा के संग में।
कितना मीठा कितना प्यारा, बाबा मिला है संगम में।।

प्रभु से सच्चा स्नेह ही योग है।

लेखिका—ब्रह्माकुमारी शीला, काठमाँण्डो (नेपाल)

इस संसार रूपी समुद्र में जीवन रूपी जहाज़ को कोई न कोई निश्चित स्थान अवश्य ही चुनना होगा। वरना जीवन के क्षण लक्ष्यहीन यात्री की भाँति मनुष्य को गुमराह करने में ही खर्च हो जाएँगे।

आज मनुष्य का जैसा गृहस्थ जीवन है उसमें वह स्वयं ही सन्तुष्ट नहीं है तभी तो वह मन्दिरों में जाकर कहता है कि "हे प्रभु, मेरे अवगुणों को हरो या विषय विकार मिटाओ।" क्योंकि मानव जानता है कि परमात्मा की याद से ही सब विकार मिट सकते हैं अर्थात् विकर्मों का बोझा हल्का हो सकता है। जैसे साँप मरने लगता है तो फड़कता रहता है वैसे ही यह पाँच ज़हरीले नाग (विकार) भी मनसा को फड़काते रहेंगे और फड़क-फड़क कर समाप्त हो जाएँगे। मगर मंसा में तूफान आये तो घबराना नहीं, धीरज रखकर शान्तिपूर्वक परमात्मा पिता की याद रूपी शक्ति से हमें अपने गृहस्थ को सहज ही सुखमय बनाना है।

'योग' शब्द प्रेम का नाम है और वह प्रेम जो मन को एकाग्र कर देवे। जैसे रोमियो और जुलियट का आपस में इतना प्रेम था कि एक दूसरे की याद स्वतः ही आती रहती थी। चकोर का चाँद से असीम प्यार होता है उस को भी स्वयं में आकर्षण होता है। पतगें भी शमा की ओर उड़कर चले जाते हैं और शमा पर जल जाते हैं। इसी प्रकार हम आत्मायें भी अगर परमात्मा के प्रेम के परवाने बन जाएं तो योग सहज और स्वतः ही लग जाएगा और मन एकाग्र हो जाएगा।

यह जीवन एक वृक्ष के समान है जिसको योग रूपी जल की अति आवश्यकता है। जैसे एक पेड़ जल प्राप्त न होने से धीरे-धीरे सूख जाता है वैसे ही परमात्मा की याद रूपी शीतल जल न मिलने से आत्मा मुरझा जाती है। जिसका ईश्वर से प्यार है उसका उसके कर्तव्य से भी अवश्य प्यार होगा। योग परमात्मा से टूटे हुए सम्बन्ध को फिर से जोड़ने का नाम है। लेकिन हमें पहले यह निश्चय करना चाहिए कि मैं तो एक आत्मा हूँ और शरीर पांच तत्व का बना हुआ है, यह तो विनाशी है। परमात्मा पिता शिव की याद ही संसार रूपी भव सागर से हमारी जीवन रूपी नाव को पार कर सकती है। इस सृष्टि का महाविनाश होने वाला है ऐसा निश्चय होने से और प्रभु चिन्तन करने से हमारा मन एकाग्र हो सकता है। शिव पिता से सबसे सरल और स्नेही नाता हम अगर दोस्त (Friend) का जोड़ ले तो बहुत ही सहज याद आती रहेगी और मन हल्का रहेगा, सच्चा रहेगा। वफ़ादारी निभाते रहेंगे मगर यह रिश्ता भी नज़दीकी तभी हो सकेगा जब हम अपना दिल उस दोस्त खुदा को देंगे। किसी ने लिखा है कि·····

"हर दोस्त वफ़ादार नहीं होता, हर पत्थर चमकदार नहीं होता
चमन में जाने कितने फूल खिलते हैं हर फूल खुशबूदार नहीं होता।"

कहने का भाव है कि हम उस ईश्वर के सच्चे प्रेमी व दोस्त बनें और अपना मन उसमें एकाग्र करें। एकाग्र मन ही सच्चा सुख शान्ति की प्राप्ति कर सकता है। किसी भूखे या प्यासे मनुष्य को सिवाये भोजन या पानी के कुछ नहीं सूझता। वैसे ही यदि मनुष्य को ज्ञान की भूख और प्रभु मिलन की प्यास हो तो उसका मन भी परमात्मा में एकाग्र हुए बिना नहीं रह सकता। प्रेम एक ऐसी चीज़ है जो एक बार किसी से हो जाता है तो वह उसी का हो जाता है, स्वप्न में भी उसी को ही देखता है। इसी तरह प्रभु के प्रति प्रेम की प्यास भी मन को एकाग्र किये बिना नहीं रहती। योग एक ऐसी शक्ति है जिससे हम महान बन सकते हैं। महान व्यक्ति अपनी

(शेष पृष्ट १२ पर)

सीता, राम और रावण का आध्यात्मिक रहस्य

लेखक—ब्र० कु० पुष्पा, लक्ष्मी नगर, देहली

सीता के बारे में यह भी प्रसिद्ध है कि खेत में हल चलाने पर जो सिता (Furrow) बनती है, वह उससे पैदा हुई थी और सीता को 'अयोनिज' (जिसका जन्म किसी योनि से न हुआ हो) भी कहा जाता है। सीता के बारे में यह भी प्रसिद्ध है कि जिस रावण ने उसका अपहरण किया था, वह 'दशानन' अर्थात् दस मुख वाला था। रामायण-पाठी मानते हैं कि रावण के कारागार में रहने के बाद सीता जब रावण से मुक्त हो राम से मिली तब स्वयं को पवित्र एवं सच्चा सिद्ध करने के लिए उसने अग्नि परीक्षा दी। लक्ष्मण ने उसके लिए अग्नि जलाई और सीता ने उस अग्नि में प्रवेश किया। जब अग्नि शांत हो चुकी तो सीता बाल-बाँका हुए बिना उसमें से निकल आई अर्थात् वह कुशलपूर्वक निकल आई। तब राम ने उसे स्वीकार किया। अब हमें इन सभी बातों पर विचार करना है कि यदि 'दशानन', 'आयोनिज', 'सीता', 'अग्नि' आदि-आदि का हम वाच्यार्थ अथवा शब्दार्थ मात्र लें तो क्या यह सारी कथा विवेक-संगत और सम्भव मालूम होती है या इन शब्दों का कोई उच्च भावार्थ है और ये शब्द अलंकारिक रूप में प्रयोग किये हैं ?

विचार करने पर आप मानेंगे कि अग्नि का तो धर्म ही जलाना है और उसमें यदि कोई प्रवेश करे तो वह उसके स्पर्श, ताप और जलन से बच नहीं सकता। 'दशानन' शब्द पर सोचने से भी आप इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि किसी भी मनुष्य अथवा राक्षस के दस मुख नहीं हो सकते। 'अयोनिज' या 'सीता' (सिता) शब्द के बारे में भी यही कहना होगा कि कोई भी नर-नारी किसी खेत की सिता से पैदा नहीं हो सकता क्योंकि हम देखते हैं कि माता-पिता द्वारा ही मनुष्य-योनि में जन्म मिलता है। अतः स्पष्ट है कि ये सभी शब्द अलंकारों के रूप में प्रयोग हुए हैं और यह सारी कथा एक उच्च भावार्थ को व्यक्त करने के लिए ही लिखी गई है न कि किसी ऐतिहासिक वृतान्त का उल्लेख करने के लिये।

इस कथा का आध्यात्मिक रहस्य लेने से ही इसका अर्थ ग्राह्य हो सकता है। आध्यात्मिक अर्थ के विचार से 'रावण' वास्तव में 'माया' का प्रतीक है क्योंकि 'रावण' का अर्थ रुलाने वाला है। रावण के दस शीश पाँच विकार नर के और पाँच विकार नारी के हैं। और 'राम' शब्द परमपिता परमात्मा 'शिव' का वाचक है क्योंकि 'राम' का अर्थ रमणीक अर्थात् खुशी देने वाला है। 'सीता' शब्द 'आत्मा' का बोधक है क्योंकि आत्मा ही 'अयोनिज' है। शरीर तो योनि से जन्म लेता है परन्तु आत्मा अजन्मा है। रावण को 'दशानन' कहने का भाव यह है कि रावण अर्थात् माया बहुत बली हैं। 'रावण' को दशानन कहने का भी यही भावार्थ है कि माया का प्रभाव दसों दिशाओं में है अर्थात् वह सर्व-व्यापक है, वह बहुत बली है।

अतः सारी कथा का सार यह है कि जब बुद्धि रूपी क्षेत्र में ज्ञानरूपी हल चलता है तो आत्मा रूपी सीता का नया जन्म जिसे 'मरजीवा जन्म' (अयोनिज जन्म कहा जाता है) होता है। तब वह राम का वरण करती है अर्थात् परमपिता परमात्मा शिव से योग साधती है। अपनी प्रीति अथवा सम्बन्ध राम (परमात्मा) के साथ जोड़ने के बाद उसके सामने कई कठिनाईयाँ आती हैं। उससे लौकिक मित्र सम्बन्धी भी छूट जाते हैं और उसके जंगल के काँटों-जैसे कष्ट सहन करने पड़ते हैं। इस पुरुषार्थ में यदि वह कभी लक्ष्मण (मन में जीवन का जो लक्ष्य है) उसकी लकीर (मर्यादा) का उल्लंघन करती है तो माया रूपी रावण, जो कि दशानन अर्थात् बड़ा बली है, उसे अपने कारागार में बन्द करके अपना बनाने की कोशिश करता है। तब आत्मा रूपी सीता को अपनी पवित्रता, अलिप्तता एवं प्रभु-निष्ठा को सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा से पारित होना पड़ता है, यह अग्नि भी कोई स्थूल अग्नि नहीं है बल्कि पाँच विकार जो कि मनुष्य को दुःख से जलाते हैं और 'अन्न-दोष, संग-दोष' तथा कलियुगी आसुरी सृष्टि की 'लोक लाज' यह ही अग्नि रूप है। जिस आत्मा रूपी सीता की परमात्मा रूपी राम के साथ सच्ची प्रीति होती है अथवा सच्चा सम्बन्ध (योग) होता है, वह इस परीक्षा को पार कर लेती है। वास्तव में यही सीता की अग्नि परीक्षा है। □

चन्दौसी मेले में चैतन्य देवियों की झांकी का उद्घाटन डा० उमा अग्रवाल जी कर रही हैं। साथ में ब्र० कु० आत्म इन्द्रा जी, मनोरमा जी, विद्या जी एवं सरोज जी खड़ी हैं।

मेरठ में आध्यात्मिक संग्रहालय देखने के पश्चात अपर जिला मजिस्ट्रेट (प्रशासन) मेरठ भ्राता चन्द्रहास जी ब्र० कु० कमल सुन्द्री से ज्ञान चर्चा सुनते हुए।

जीन्द में हुए राजयोग भवन उद्घाटन समारोह में आदरणीया दीदी मनमोहिनी जी ध्वजारोहण करते हुए, साथ में ब्र० कु० हृदयमोहिनी जी, मांगेराम जी तथा बाबु दया कृष्ण जी खड़े हैं।

चन्डीगढ़ में भ्राता जोशी जी, जनरल मेनेजर टेलीफोन आध्यात्मिक प्रदर्शनी में चित्रों की व्याख्या सुनते हुए।

बेलगाम में पुलिस कर्मचारियों के लिये रखे कार्यक्रम में सम्बोधन करती हुई ब्र० कु० उषा जी।

गाजियाबाद में अतिरिक्त जिला जज को ईश्वरीय सन्देश देने के पश्चात (बाएं से) ब्र० कु० स्वदर्शन, विमला, सतीश, ब्र०कु० किशोरी लाल जी, अतिरिक्त जिला जज तथा उनके परिवार के सदस्यों के साथ खड़े हैं।

हुबली में ब्र० कु० बसवराज जी आध्यात्मिक समारोह में प्रवचन करते हुए। मंच पर (दाएं से) ब्र० कु० निर्मला, एच० ए० सोमेश, आयुक्त हुबली धारवाड़ कारपोरेशन तथा भ्राता सज्जन जी।

शोलापुर में एक सार्वजनिक कार्यक्रम में भाग लेते हुए (बाएं से) भ्राता धर्मण्ण सादुक, ब्र० कु० बाबुराव जी, शंकरराव गांगजी, विनायक राव पाटिल भ्राता रामेश्वर लाल गठ्टाणी, ब्र० कु० सोमप्रभा, महानन्दा तथा भ्राता तुलजा राम दासरी जी।

चन्डीगढ़ में आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन करने के पश्चात् भ्राता केवल कृष्ण जी राजस्व मन्त्री पंजाब राज्य, ब्र० कु० अमीर चन्द तथा ब्र० कु० अचल बहन के साथ।

हैदराबाद में विश्व शान्ति महोत्सव में चैतन्य देवियों की झांकी देखते हुए जनता की भीड़।

पुरी केन्द्र के ५वें वार्षिकोत्सव पर ब्र० कु० निर्मल शान्ता जी इन्चार्ज पूर्वीय क्षेत्र, जनता को सम्बोधन करती हुई। उनके दाएं ब्र० कु० बिन्दु, नीलम तथा बाएं ब्र० कु० रमेश जी, भ्राता हरुउनन्डा रे, प्रिन्सीपल एस० सी० एस० कालेज पुरी तथा ब्र० कु० निरुपमा जी मंच पर विराजमान हैं।

दार्जिलिंग में ए० डी० सी० सुशील कुमार मित्ता जी को ८३ में होने वाली कान्फ्रेन्स का निमन्त्रण देते हुई ब्र० कु० स्वदर्शन तथा केसर जी।

सच्चा श्रवणकुमार

ब्र० कु० चक्रधारी, देहली

प्यारे बच्चो, दशहरे के दिनों में जगह-जगह राम कथाएँ सुनने को मिलती हैं और अनेक स्थानों पर रामलीलाएँ भी नाटकीय ढंग से पेश की जाती हैं। राम-कथा से जुड़े हुए अनेक ऐसे प्रसंग भी हैं जो प्रेरणादायक हैं परन्तु उनकी ओर प्रायः इतना ध्यान नहीं दिया जाता। वास्तव में देखा जाय तो वे प्रसंग अपना एक अलग ही अस्तित्व और महत्व रखते हैं परन्तु शायद उन्हें मुख्य कथा के साथ येन-केन-प्रकारेण इसलिए जोड़ दिया गया है कि वे भी किसी तरह सुरक्षित रहें और समयान्तर में लुप्त न हो जाएँ। ऐसा ही एक प्रसंग श्रवण कुमार की कथा के नाम से प्रसिद्ध है :

कथा अथवा आख्यान इस प्रकार है कि बालक श्रवण कुमार के माता-पिता नेत्रहीन थे। जब उन्होंने वृद्धावस्था में प्रवेश किया तो उनके मन में यह उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई कि वे तीर्थ यात्रा करें। परन्तु एक तो वे चक्षु-विहीन थे और दूसरे वे इतने धनवान भी न थे कि यात्रा का खर्च वहन कर सकते। अतः उन्होंने सोचा कि उनकी यह मनो-आकांक्षा शायद मरते दम तक रह ही जाएगी। फिर भी उन्होंने अपने बालक श्रवण कुमार को अपनी इच्छा, साथ-साथ अपनी असमर्थता की बात सुना दी।

श्रवण कुमार मातृ-भक्त एवं पितृ-भक्त बालक था। वह अपने माता-पिता की सेवा के लिए अपना कोई भी सुख व सुविधा छोड़ने को तैयार था। हाँ, शर्त यह थी कि माता-पिता के कर्म, धर्म-सम्मत होंगे। जब उस बालक ने यह जान लिया कि उसके माता-पिता की यह हार्दिक एवं अन्तिम इच्छा है कि वे तीर्थ स्थानों की यात्रा करें तो उस बालक के मन में यह विचार उठा कि माता-पिता की यह वाँछित सेवा की जाए। आख्यान में बताया गया है कि उसने एक वाहनगो लेकर उसने एक ओर अपनी माता और एक ओर अपने पिता को बिठा दिया और उन्हें यात्रा कराने निकल पड़ा। अथक होकर सेवा करने वाले उस बालक श्रवण कुमार के मन में बहुत खुशी थी। उसके माँ-बाप भी उससे बहुत प्रसन्न थे और उसे आशीवाद देते थे।

परन्तु एक दिन एक अजीब ही घटना घट गई। आख्यान में बताया गया है कि श्रवण कुमार के माता-पिता को बड़े ज़ोर से प्यास लगी। श्रवण कुमार उन्हें एक सुरक्षित स्थान पर छोड़कर पानी लेने निकल पड़ा। पानी के किनारे पहुँच कर जब वह कलश भरने लगा तो कलश में पानी के प्रवेश से एक ध्वनि-सी हो रही थी।

संयोग की बात है कि राजा दशरथ भी उस समय उसी स्थान से कुछ दूरी पर पहुँचे थे। आख्यान में बताया गया है कि राजा दशरथ व्यक्ति या वस्तु को देखे बिना उस व्यक्ति अथवा वस्तु से आने वाली आवाज़ से जान लेते थे कि वह कहाँ और कितनी दूर है और इस सूझ-बूझ के आधार पर वे शब्द-वाण अथवा शब्द-भेदी वाण के द्वारा उसे अपना निशाना बना देते। ऐसा ही उन्होंने तब किया जब श्रवण कुमार पानी भर रहा था। कथा में लिखा गया है कि राजा दशरथ को ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई पशु अपनी प्यास बुझाने के लिए यहाँ आकर पानी पी रहा है। उन्होंने अपनी वाण विद्या को आज़माने के लिए शब्द बाण छोड़ दिये।

बस, ये बाण सीधे ही श्रवण कुमार को जाकर

लगे और वह वहीं हाय·····कह कर गिर पड़ा। दशरथ जब उसके पास आए तो उन्हें सारा माजरा मालूम हुआ। वे बहुत दुखित हुए परन्तु अब हो ही क्या सकता था। उनके प्रायश्चित वाक्य सुनकर अपने प्राणान्त का संकेत देते हुए बालक श्रवणकुमार ने राजा दशरथ को बता दिया कि वह माता-पिता को यात्रा कराने के संकल्प से आया था और कि वे प्यास से व्याकुल थे और कि अपने पुत्र की प्रतीक्षा से पीड़ित अमुक स्थान पर बैठे हैं और कि राजा उसकी चिन्ता छोड़कर उसके माता-पिता को पानी पिलाने की सेवा करे। नेत्रहीन माता-पिता के शोक युक्त कोप से घबराता हुआ उनके पास पहुँचा और उनको डरते-डरते यह दुःखान्त समाचार सुनाया और उनसे क्षमा-प्रार्थना करने ही लगा था कि अपने इकलौते बेटे के वियोग से दुःखित उन माता-पिता ने राजा को श्राप दे दिया। कथा में बताया गया है कि उन्हीं के श्राप के परिणाम स्वरूप राजा को अपने प्रिय पुत्र राम को बनवास देकर उनके वियोग का दुख भोगना पड़ा।

अब यदि इस कथा पर विचार किया जाय तो ऐसा लगता है कि अपने आदि स्वरूप में यह कथा कुछ भिन्न थी, परन्तु चूँकि यह एक प्रेरणादायक और उच्च आदर्श को व्यक्त करने वाली कथा थी, इसलिए राम-कथा के साथ इसे जोड़ दिया गया ताकि यह सुरक्षित रहे।

उदाहरण के तौर पर इसमें देखने योग्य एक बात तो यह है कि उन दिनों में अभी दशरथ-सुत राम ने न अपना स्वयंवर ही किया था, न कुछ और मर्यादा युक्त चरित्र ही दिखाये थे; इसलिये न तो उनकी कोई भक्ति शुरू हुई थी और न उनके जीवन से सम्बन्धित स्थानों को तीर्थ-स्थान ही माना जाने लगा था। इसके अतिरिक्त पुराणों में श्री कृष्ण को तो श्रीराम के बाद द्वापर युग में ही माना गया है; इसलिए श्रीकृष्ण से सम्बन्धित यात्रा स्थान भी तब नहीं थे। तब भला श्रवण कुमार अपने माता-पिता को किन यात्रा स्थानों की यात्रा कराने ले गया! त्रेता युग में तो धर्म के तीन पाद कायम रहते हैं। वहाँ के वासी धर्म-निष्ठ अर्थात् पवित्र होते हैं तब उन्हें तीर्थ यात्रा करने की चेष्टा ही क्यों हो। इससे स्पष्ट है कि इसमें किसी और प्रकार की यात्रा अभिप्रेत है और यह कथा भी किसी अन्य युग से सम्बन्धित है जिसमें लोगों को बुढ़ापे तथा पुत्र-वियोग का शोक आदि दुःख होते हैं।

श्रवण कुमार के माता-पिता दोनों ही का नेत्रहीन होना भी एक असाधारण और असामान्य वृत्तान्त मालूम होता है। और हम देखते भी हैं कि लोकाचार में नेत्रहीन, अन्धे, चक्षु-विहीन इत्यादि शब्दों का प्रयोग लाक्षणिक तौर पर भी होता ह। उदाहरण के तौर पर जिसे ज्ञान प्राप्त न हो, उसे भी अज्ञानान्ध अथवा ज्ञान-चक्षु विहीन कह दिया जाता है। अतः माता और पिता, दोनों का नेत्रहीन होना इसी अर्थ में ज़्यादा सम्भव लगता है।

इस बात की पुष्टि 'श्रवण कुमार' नाम से भी हो जाती है। क्योंकि 'श्रवण' शब्द का अर्थ सुनना है और ज्ञान पहले सुना जाता है। ज्ञान सुनने वाला व्यक्ति ब्रह्मचर्य अथवा कौमार्य व्रत का पालन भी करता ही है इसलिए वह श्रवण कुमार ही होता है। वही ज्ञान-रहित अपने माता-पिता को सतसंग के स्थानरूपी तीर्थ पर ले जाकर उनकी ज्ञान-पिपासा तृप्त करने की सेवा कर सकता है। वरना सोचना चाहिए कि कोई भी बालक अपने माता-पिता को वाहनगी में बिठाकर उन्हें अपने कन्धे पर लेकर नहीं चल पड़ता। यदि वह ऐसा करते तो वह अपने जीवन-भर में कितने स्थानों पर ले जा सकेगा और वे स्थान देख तो वे तब भी नहीं सकेंगे। अतः यह मानसिक तीर्थों ही की बात है जहाँ जाकर मनुष्य का जीवन उज्ज्वल हो और मनुष्य को ज्ञान का नेत्र मिले। इसी प्रकार 'कन्धा देना' भी सहारा देने का वाचक है। यहाँ 'कन्धा देने' से अभिप्राय कोई स्थूल कन्धे पर वाहनगी उठाना नहीं है बल्कि सहयोगी बनना है और सबसे बड़ा सहयोग वह सहयोग है जिससे मनुष्य की जीवन यात्रा सफल हो और मनुष्य ऐसे स्थान पर पहुँच जाए जहाँ उसकी प्रभु-प्राप्ति की प्यास पूरी हो। यों बच्चे को 'बुढ़ापे की लाठी' भी कहा गया है; स्थूल अर्थ में तो कोई भी बच्चा 'लाठी' नहीं होता परन्तु

जैसे बुढ़ापे में लाठी सहारे का काम देती है, वैसे ही बच्चा भी माँ-बाप की वृद्धावस्था में हर प्रकार से उनका सहारा ही होता है—इसी उपमा में उसे लाठी कह दिया जाता है।

उपरोक्त बातों से स्पष्ट है कि इस स्वतन्त्र कथा को रामकथा के साथ येन-केन-प्रकारेण जोड़ ही दिया गया है। वास्तव में इस कथा का सम्बन्ध तो उस युग से है जब परमात्मा, जिन्हें ही निराकार राम भी कहा गया है, इस सृष्टि पर स्वयं ही अवतरित होते हैं तब वे जो ज्ञान और योग के रहस्य सुनाते हैं, उन्हें सुनकर धारण करने वाले व्यक्ति ही श्रवण कुमार हैं जो कि अपने लौकिक मात-पिता तथा अन्य किसी भी वृद्ध जन की ज्ञान-सेवा करते हैं।

अतः बच्चो, इस भाव को जानकर आप भी सच्चे श्रवण कुमार बनो। ☐

(सुदेश बहन का टी० वी० इन्टरव्यु पृष्ठ ३० का शेष)

बनाओ। यह समय माँगने का नहीं, माँगने से थोड़ी-सी चीज मिलती परन्तु परमात्मा की आज्ञा पर चलने से तो वह स्वयं ही सम्पूर्ण कर देता। सृष्टि पर स्वर्ग बना देता। जहाँ कोई लड़ाई झगड़ा नहीं।

प्रश्न—क्या यह सम्भव है कि मनुष्य की बुद्धि स्वच्छ हो सकती है ?

उत्तर—आपके बाइबिल में भी मिसाल आता है और भारत के शास्त्रों में भी वर्णन है स्वर्ग में शेर-बकरी एक घाट पर पानी पीते थे। जब जानवरों की बुद्धि बदल सकती तो क्या मनुष्य की बुद्धि नहीं बदल सकती। सिर्फ सर्वशक्तिबान परमात्मा से सम्बन्ध चाहिए।

प्रश्न—आपके दृष्टिकोण से प्रेयर में क्या पावर है अथवा मेडीटेशन की पावर क्या है ?

उत्तर—पावर अर्थात् शक्ति—इसका सबूत होता परिवर्तन करना। राजयोग के मेडीटेशन में हम दो दृष्टिकोण से पावर को अनुभव करते, जितना-जितना हम योग लगाते जाते हमारे अन्दर की आत्मा की कमजोरियाँ निकलती जाती अथवा बिनाश होती जाती। योग को अग्नि कहते हैं जिससे आत्मा के विकर्म बिनाश होते हैं, विकार दूर होते। तो शक्ति से मेरा मतलब आत्मा शक्ति स्वरूप हो जाती, पवित्र हो जाती है। फ्री फ्राम डिफेक्टस। दूसरा दृष्टिकोण—फ्री फ्राम इफेक्टस—प्रभाव से परे मनुष्य आज अपनी कमजोरियों के कारण तो दुःखी होता ही है परन्तु दूसरे की कमजोरियों का असर मनुष्य को और भी दुःखी कर देता है। राजयोग की शक्ति आत्मा में स्वयं भी शान्ति तथा अन्य गुणों का अनुभव कराती है। तो दूसरों की भी कमजोरी को दूर करने राजयोगी स्नेह तथा शुभ-भावना से मदद करता है। अतः राजयोग की शक्ति से कमजोरी व विकार, अशान्ति-क्लेश खत्म होता तथा सुख-शान्ति, शक्ति, पवित्रता की स्थापना तथा वृद्धि होती है।

प्रश्न—क्या राजयोग का बल, शारीरिक तन्दरुस्ती में भी कुछ मदद करता है—रोग दूर होते हैं ?

उत्तर—शारीरिक बीमारी भी कर्मों के हिसाब-किताब से होती है। राजयोग से विकार दूर होते हैं, विकर्म बिनाश होते हैं, परमात्मा से सम्बन्ध जुटने से खुशी तथा उसकी छत्रछाया का अनुभव होता है तो मन तथा तन के रोग दूर होते हैं। हमारे पास ऐसे कई राजयोगियों का मिसाल है जो टी० बी०, डिपरेशन, केन्सर आदि के अलग-अलग रोगियों को, किसी को छोटी, किसी को भयानक बीमारी थी परन्तु याद के बल से स्वयं को उसके प्रभाव से परे परमात्मा की छत्रछाया में दुःख का अनुभव बिल्कुल नहीं करते और काफी केसेज में तो बीमारी दूर भी हुई है। राजयोग में मुख्य बात मनोबल बढ़ जाता है। तो नैचुरल प्रकृति को, शरीर को चलाने का ढंग आ जाता है। योग से हैल्थ, हैपीनेस जरूर मिलती है।

प्रश्न—मनुष्य की कमजोरियाँ दूर क्यों नहीं होती उसका कारण क्या है ?

उत्तर—मनुष्य स्वयं को देह समझकर बैठा है। आत्मा समझे तो आत्मा के गुणों का अनुभव करे। और कमजोरियाँ दूर हो सकें।

इस प्रकार लगभग डेढ़ घण्टे तक टी० वी० इन्टरव्यू चला। प्रश्न उत्तर के पश्चात् प्रैक्टिकल आत्म अनुभूति तथा परमात्मानुभूति कराने हेतु मेडीटेशन भी कराया। ☐

"मैक्सिको में ब्रह्माकुमारी सुदेश बहन का टी० वी० इन्टरव्यू"

प्रश्न—ब्रह्माकुमारी का अर्थ क्या है ?

उत्तर—ब्रह्मा—का मतलब फादर ऑफ दी पीपुल। प्रजापिता ब्रह्मा को ही अंग्रेजी में एडम कहते हैं, हम उनके बच्चे ब्रह्माकुमार और ब्रह्माकुमारियाँ कहलाते हैं।

प्रश्न—एडम या ब्रह्मा नाम क्यों ?

उत्तर—ब्रह्मा नाम परमपिता परमात्मा ने इसे स्वयं ही दिया है। एडम मीन्स फर्स्ट मैन जिसको हिन्दी में आदिदेव कहते हैं। ब्रह्मा नाम इसीलिए पड़ा है कि ब्रह्मलोक का वासी परमात्मा इसमें आता है और इस द्वारा अपना परिचय देता है। ब्रह्माकुमारी का अर्थ है पवित्रता की पालना करने वाली, परमात्मा से पवित्र सम्बन्ध जोड़ और आत्माओं का भी सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ने वाली। परमात्मा ब्रह्मलोक में आत्माओं का पिता नहीं बनता वहाँ वह गॉड है परन्तु प्रजापिता ब्रह्मा में आता है तो आत्मा का परमात्मा से सम्बन्ध जुड़ता है। आत्मा रीति से हम परमात्मा की सन्तान हैं। साकार सृष्टि में हम प्रजापिता ब्रह्मा अथवा एडम की सन्तान हैं। अतः ब्रह्माकुमारी का अर्थ है परमात्मा तथा एडम की सन्तान।

प्रश्न—क्या ब्रह्माकुमारी कोई धर्म है ?

उत्तर—धर्म का अर्थ है प्रैक्टिकल जीवन में धारणा, इस दृष्टिकोण से यह धर्म है परन्तु यदि धर्म का अर्थ आप अन्धश्रधा या रस्म रिवाज लें तो यह धर्म नहीं परन्तु ब्रह्माकुमारीज़ एज्यूकेशन है, शिक्षा है, जिसमें जीवन को सुधारने की कला सिखाई जाती है। यह ईश्वरीय विश्व-विद्यालय है जिसके ८०० सेवाकेन्द्र विश्व भर में हैं जिनमें परमात्मा से सम्बन्ध जोड़कर स्वधर्म में टिकने की शिक्षा मिलती है। इसलिए यह युनिवर्सल धर्म है।

प्रश्न—प्रेयर तथा राजयोग मेडीटेशन में क्या अन्तर है ?

उत्तर—प्रार्थना अथवा प्रेयर में भगवान को दाता, खुद को भिखारी समझते हैं, परमात्मा से बहुत दूर समझते हैं, राजयोग में परमात्मा के नजदीक आते हैं। २. प्रार्थना में मनुष्य खुद को भूला हुआ होता, उसका लक्ष्य सिर्फ भगवान को ही याद करना है, परन्तु राजयोग मेडीटेशन में परमात्मा कहते "बच्चे तुम खुद को भी याद करो, याद रखो तुम शुद्ध पवित्र शान्त स्वरूप आत्मा हो—तथा मुझ पिता परमात्मा की सन्तान हो। राजयोग मेडीटेशन में खुद तथा खुदा दोनों याद होते।" दोनों नजदीक के सम्बन्ध में आते इसी कारण इसे प्रार्थना न कहकर योग कहा जाता है। प्रेयर से भक्त भगवान से बोलता, भगवान नहीं। परन्तु योग में परमात्मा आत्मा से बात करता, वार्तालाप होती। ३. प्रार्थना में मनुष्य सदा यही समझता कि वह नीच है, परमात्मा ऊँच है परन्तु राजयोग मेडीटेशन—आत्मा की ऊँच स्थिति को याद कर बैठने की स्थिति को ही योग कहते हैं। परमात्मा याद कराते हैं कि तुम असल में ऊँच श्रेष्ठ आत्मा थीं। शक्ति स्वरूप आत्मा हो।

४. राजयोग मेडीटेशन में हम कुछ माँगते नहीं हैं परन्तु अधिकारी बनकर बैठते हैं। बच्चा सदा बाप की सब सम्पत्ति का मालिक होता है।

प्रश्न—बहिन जी, दुनियावी चीजें परमात्मा से न मांगे यह तो ठीक है परन्तु यह माँगना तो ठीक है कि भगवान मनुष्यों की बुद्धि ऐसी बनाओ जो आपस में लड़ें नहीं ?

उत्तर—वास्तव में परमात्मा पिता की यह आशा है। जैसे किसी भी बाप की यह शुभ आशा होती कि मेरा बच्चा बुद्धिमान बने, सद्बुद्धि वाला हो। अब उससे यह भी मांगने की बात नहीं। इस समय परमात्मा खुद ही हम बच्चों को कह रहा है, बुद्धियोग मेरे साथ लगाओ, बुद्धि को सतोगुणी

(शेष पृष्ट २९ पर)

आध्यात्मिक सेवा-समाचार

रक्षा बन्धन तथा जन्माष्टमी पर की गई सेवाओं के समाचार अभी तक भी आ रहे हैं। राखी के फोटो भी अभी तक पहुँच रहे हैं। अभी तो आप दशहरा पर ईश्वरीय सन्देश देने की तैयारी में होंगे। स्थानाभाव के कारण देर से मिलने वाले समाचार और फोटो छापना हमारे लिये सम्भव नहीं हैं।

व्यवस्थापक

देहली क्षेत्र में आध्यात्मिक मेले

कुछ समय से देहली में आध्यात्मिक मेलों का ताँता लगा हुआ है। पहले शक्तिनगर, फिर कश्मीरी गेट, अजमल खाँ पार्क में आध्यात्मिक मेले लगाए गए जिनका बहुत ही उत्साह वर्धक परिणाम निकला है। ४ सितम्बर से १४ सितम्बर तक अशोक विहार में मानव उत्थान शान्ति मेले का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन भ्राता बालेश्वर राम, भारत के कृषि राज्य मन्त्री तथा ब्र०कु० दीदी मनमोहिनी जी, अतिरिक्त प्रशासिका ब्र० कु० ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर भ्राता बसन्त दादा पाटिल मुख्य सचिव काँग्रेस (आई) मुख्य अतिथि थे। प्रतिदिन इस मेले को हज़ारों आत्माओं ने देखा तथा लगभग ५०० आत्माओं ने योग शिविर किया। इस अवसर पर मुख्य व्यक्तियों का स्नेह मिलन रखा गया जिसमें विशेषकर दिल्ली विश्व-विद्यालय के उपकुलपति, वसन्त दादा पाटिल, हंस-राज कालेज के प्रिन्सीपल, न्यायाधीश सेन जी, गायत्री मोदी आदि-आदि व्यक्ति ब्रह्माभोजन पर उपस्थित थे।

देहली-लक्ष्मी नगर में नए उप-सेवा केन्द्र का उद्घाटन आदरणीय दीदी मनमोहिनी जी द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर उस क्षेत्र के मुख्य-मुख्य व्यक्तियों के इलावा भ्राता सुशील अन्सल, अध्यक्ष अन्सल प्रापर्टीज़ तथा इन्डस्ट्रीज़ तथा भ्राता टेकचन्द जैन अध्यक्ष जैना प्रापर्टीज़ भी पधारें। दीदी जी की पधरामणि से इस क्षेत्र के लोगों में काफ़ी उत्साह उमंग भर गया है।

पहाड़गंज नई दिल्ली में मोतियाखान में आत्म-जागृति मेले का आयोजन किया हुआ है इसका उद्-घाटन ब्र० कु० हृदयमोहिनी ज़ी इन्चार्ज देहली क्षेत्र तथा अन्य धर्म के मुख्यों द्वारा दीप जलाकर सम्पन्न हुआ। इस समय प्रतिदिन इस आयोजन से हज़ारों आत्माएँ धार्मिक लाभ ले रही हैं। मोदी नगर, मथुरा, मालवीय नगर, में आध्यात्मिक मेले आयोजन करने की तैयारियाँ बड़े ज़ोर-शोर से जारी हैं।

भंडारा उपसेवा केन्द्र से समाचार मिला है कि शहर के निकटवर्ती गाँवों—सिल्ली गाँव, मानेगाँव, परसोडी में प्रवचन तथा प्रोजैक्टर शो के कार्यक्रम तथा खरबी में १० दिन के लिए आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिनसे हज़ारों आत्माओं को शिव-पिता का संदेश मिला।

बंगलौर सेवा केन्द्र की ओर से गत मास दो-दिन के लिए 'शान्ति सम्मेलन' का आयोजन किया गया। शान्ति यात्रा भी निकाली गई। सम्मेलन के विषय थे—"राजयोग द्वारा मानसिक तनाव कैसे दूर हो", "सर्व धर्मों में से मतभेद हटाकर कैसे शान्ति स्थापन हो" आदि, जिन पर अनेक प्रवक्ताओं ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। सभी उपस्थित श्रोतागण बहुत प्रभावित हुए तथा यह समाचार पत्रों द्वारा भी प्रसा-रित किया गया।

पटना सेवा केन्द्र से निर्मल मणि बहिन लिखती हैं कि बिहार के राज्यपाल भ्राता ए० आर० किदवई आध्यात्मिक संग्रहालय देखने के लिए पधारे जिनका फूलों का गुलदस्ता भेंट करके स्वागत किया गया, योग द्वारा शान्ति का अनुभव कराया गया तथा सौगात भी भेंट की। राज्यपाल जी यहाँ का अलौ-किक प्यार और शान्तिपूर्ण सुव्यवस्था को देखकर बहुत प्रभावित हुए।

कटक सेवा केन्द्र से समाचार मिला कि वहाँ पर नवाँ वार्षिक उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया गया तथा सायं को प्रवचन तथा प्रोजैक्टर शो का भी आयोजन

किया गया। बाढ़ पीड़ित इलाके में ५००० भोजन के पैकटों पर बाबा का संदेश चिपका कर बाँटे गए। थियोसोफिकल सोसायटी के निमंत्रण पर नारी सेवा सदन में आध्यात्मिक प्रवचन किए गए। उड़ीसा के मुख्य न्यायाधीश भ्राता पी० के० मोहन्ती के पिताजी की मृत्यु के अवसर पर शान्ति का योगदान देने के लिए विशेष कार्यक्रम रखा गया। जिसमें आए हुए अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों को प्रोजैक्टर शो के माध्यम से ईश्वरीय संदेश दिया गया। इसके अतिरिक्त बलांगीर जिला में त्रिदिवसीय आध्यात्मिक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया।

इलाहाबाद सेवा केन्द्र से समाचार मिला है कि ग्रामीण क्षेत्रों की आत्माओं को बाप-दादा का संदेश देने हेतु गतिशील कार्यक्रम बनाया गया है, जिसके अन्तर्गत सेमरहा, पंचदेवरा, खाई आदि गाँवों में प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त भीरपुर गाँव में डा० रामप्रसाद सिंह के आग्रह पर योगशिविर रखा गया। क्रूरता, उद्दंडता तथा डकैती जैसे कार्य करने वाली वहाँ की जनता ने योगशिविर में उपस्थित होकर अपनी बुराइयों को स्वयं वर्णन कर छोड़ने को प्रतिज्ञा की।

पटियाला सेवा केन्द्र द्वारा १९८३ में होने वाली 'विश्व शान्ति सम्मेलन' के सम्बन्ध में १५ से ३१ अगस्त तक विशेष वी० आई० पी० की सेवा का पखवाड़ा मनाया गया, जिसके अंतर्गत अनेक व्यक्तियों से उनके निवास स्थान पर तथा टेलीफोन द्वारा सम्पर्क स्थापित किया गया।

जगन्नाथ पुरी सेवा केन्द्र से समाचार मिला है कि वहाँ पर पाँचवाँ वार्षिक उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया गया। चिरंजीलाल सत्संग भवन में आयोजित सार्वजनिक कार्यक्रम में नृत्य, गीत, प्रोजैक्टर शो तथा प्रवचन हुए।

मुलाना (अम्बाला) उपसेवा केन्द्र से समाचार मिला है वहाँ के स्कूलों में चरित्र-निर्माण विषय पर प्रवचन हुए, जिनसे लगभग २५०० विद्यार्थियों और ५० शिक्षकों ने लाभ उठाया। इसके अतिरिक्त मुलाना गाँव में चरित्र-निर्माण प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया तथा प्रोजैक्टर शो और प्रवचन भी हुए।

अम्बाला कैंट सेवा केन्द्र से प्राप्त समाचार के अनुसार वहाँ पर सरकारी तथा गैर सरकारी स्कूलों में विद्यार्थियों के चरित्र-उत्थान के लिए चरित्र-निर्माण विषयों पर प्रवचन किए गए।

राउरकेला सेवा केन्द्र से ब्र० कु० सरोज लिखती है कि वहाँ पर गणेश पूजा के अवसर पर लगे हुए सार्वजनिक मेले में एक स्टाल लेकर आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा राजयोग शिविर का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन वहाँ के एस० पी० महोदय ने किया।

नीलमंगला सेवा केन्द्र से हेमा बहिन लिखती हैं कि बारहवाँ वार्षिक उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा राजयोग शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें आए सदा शिव स्वामी जी तथा शिव रुद्र स्वामी जी ने ईश्वरीय ज्ञान देने की इस विधि की बहुत प्रशंसा की।

कासगंज सेवा केन्द्र से समाचार मिला है कि चन्दौसी में, गणेश चौथ के अवसर पर आयोजित सार्वजनिक मेले में १० दिन के लिए मानव उत्थान आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई, नौ चैतन्य देवियों की झाँकियाँ भी सजाई गई।

झुंझुनू सेवा केन्द्र से प्राप्त समाचार के अनुसार वहाँ पर तीन दिन के लिए योग शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें सभी वर्गों की लगभग २५-३० आत्माओं ने भाग लिया।

बेलगाम सेवा-केन्द्र की ओर से विशेष पुलिस विभाग की सेवा की गई। वहाँ के डी० आई० जी०, भ्राता बर्मन तथा सुपरिंटेंडेंट भ्राता राव के सहयोग से लगभग ३०० पुलिस कर्मचारियों को परमपिता का संदेश दिया गया।

मोरवी से समाचार मिला है कि रक्षा-बन्धन और जन्माष्टमी पर ईश्वरीय सन्देश देने के पश्चात् १५ किलोमीटर दूर रंगपुर में प्रदर्शनी लगाई गई जिससे वहाँ की जनता ने काफ़ी लाभ लिया।

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक बी 9/19 कृष्ण नगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा एगन प्रिण्टर्स, कृष्ण नगर, दिल्ली-51 से छपवाया, Regd. No. 10563/65-D, (E)—70